ज्ञानामृत

अक्तूबर, 1984
वर्ष 20 ❋ अंक 4
मूल्य 1.35

परमात्मा शिव

हैदराबाद में राजभवन में भारत के राष्ट्रपति माननीय ज्ञानी जैल सिंह जी को ब्र.कु. प्रीतम शिव बाबा का सुन्दर चित्र भेंट करते हुए । ब्र.कु. विजया, दुर्गा, ब्र.कु. सुभाष तथा ब्र.कु. राधेश्याम भी चित्र में दिखाई दे रहे हैं ।

बम्बई में भाईदास हाल में ब्र.कु. दादी प्रकाशमणि जी के विदेश यात्रा पर प्रस्थान के अवसर पर हुए समारोह में ब्र.कु. दादी प्रकाशमणि जी सभा को सम्बोधित करते हुए । उनके दाईं ओर ब्र.कु. जगदीश चन्द्रजी तथा ब्र.कु. मीरा बैठी हैं तथा बाईं ओर बम्बई उच्चन्यायालय के न्यायाधीश भ्राता प्रताप जी, सुप्रसिद्ध उद्योगपति मोहन भाई पटेल, दादी ब्रिज इन्द्रा जी तथा मोहनी बहन विराजमान हैं ।

नेरोबी सेवाकेन्द्र पर केन्या में भारतीय उच्चायुक्त भ्राता कृष्ण राणा ब्र.कु. दादी जानकी जी तथा ब्र.कु. वेदान्ती जी के साथ खड़े हैं ।

ताण्डूर (आ.प्र.) में ब्र.कु. चन्द्रमणि, सहायक प्रशासिका ब्र.कु.ई.वि. विद्यालय के पधारने पर वहां के मुनसिफ मेजिस्ट्रेट तथा अन्य उन का स्वागत करते हुए

नारायणपुर (कनार्टक) में एक आध्यात्मिक कार्यक्रम में सम्बोधित करती हुई ब्र.कु. दादी चन्द्रमणि जी । साथ में कृष्णा काडा के सुपरिटेन्डेन्ट तथा सिंचाई विभाग के सुपरिटेन्डेन्ट, ब्र.कु. विजया तथा ब्र.कु. प्रेम दिखाई दे रहे हैं ।

नेरोबी में आयोजित विश्व परिषद् 'धर्म और शान्ति' में ब्र.कु. जयन्ती बहन ब्र.कु विश्वविद्यालय की ओर से विचार व्यक्त करते हुए ।

काठमाण्डो में 'विश्व शान्ति भवन' में नेपाल की राजमाता के जन्म दिन पर आयोजित समारोह में सम्बोधित करते हुए नेपाल उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश भ्राता वासुदेव शर्मा जी । मंच पर विराजमान हैं ठमेल के सभापति डा. ढकाल, श्रीमति ठकाल तथा ब्र.कु. राज जी ।

शाहबाद ए.सी.सी. सीमेन्ट फैक्टरी के क्लब में आयोजित कार्यक्रम में फैक्टरी के जनरल मैनेजर भ्राता एल.पी. व्ही रमनमूर्ति अपना वक्तव्य देते हुए । साथ में दादी चन्द्रमणि, ब्र.कु. आशा, रत्ना बहन मनोरमा तथा ब्र.कु. प्रेम बैठे हैं ।

भुवनेश्वर में भ्राता ज्ञान चन्द, मुख्य सचिव उड़ीसा राज्य, सेवा केन्द्र पर पधारे । ब्र.कु. दादी निर्मलशान्ता, ब्र.कु. ब्रिजमोहन, ब्र.कु. सन्देशी, ब्र.कु. रमेश तथा अन्य उन के साथ दिखाई दे रहे हैं ।

Regd. No. 10563/65 D (E)—70

नई दिल्ली में ब्र.कु. राज भारत के उपराष्ट्रपति जी को ईश्वरीय सौगात भेंट करते हुए । ब्र.कु. आशा साथ में है ।

जयपुर में ब्र.कु. सुषमा भ्राता राजीव गांधी जी को आबू पर्वत पर १९८५ में होने वाले विश्व शान्ति सम्मेलन का निमन्त्रण देते हुए ।

मोम्बासा (केन्या) में 'मानवता के लिये नई आशा' कार्यक्रम में शिव बाबा का सन्देश देती हुई ब्र.कु. दादी जानकी जी । मंच पर मोम्बासा के प्रान्तीय कमिश्नर ब्र.कु. वेदान्ती तथा प्रतिमा विराजमान है ।

विलिंगटन (न्यूजीलैण्ड) सेवा केन्द्र पर भारत से आदरणीय स्वामी प्रकाशानन्द जी पधारे, वे अपने उद्गार प्रकट कर रहे है । साथ में ब्र.कु. भावना है ।

दावनगिरी में राजयोग प्रशिक्षण केन्द्र के उदघाटन कार्यक्रम में भाग ले रहे हैं ब्र.कु. दादी चन्द्रमणि जी, भ्राता एस.सी. बरमन, डी.आई.जी. तथा ब्र.कु. आशा जी ।

संयुक्त राष्ट्रसंघ के महासचिव, ब्र.कु. दादी प्रकाशमणी जी का संयुक्त राष्ट्रसंघ के मुख्यालय में स्वागत करते हुए ।

अमृत-सूची

१.	सर्वोत्तम सेवा (सम्पादकीय)	२	
२.	राम और रावण का परिचय	४	
३.	तुम शान्ति के अवतार हो	५	
४	फैसला	६	
५.	रात और दिन	८	
६.	योगी होगा नहीं वियोगी (कविता)	८	
७.	दीपावली अथवा दीपमाला	९	
८.	सचित्र समाचार	११	
९.	औद्योगिक शान्ति तथा न्यासी भाव	१३	
१०.	सर्वधर्म समन्वय	१८	
११	शान्ति की खोज	१९	
१२.	जलायेंगे रावण तो बनेंगे पावन	२०	
१३.	शरीरधारियों के साथ शुद्ध स्नेह प्रभुप्रेम में बाधक नहीं	२२	
१४.	याद रख (कविता)	२४	
१५.	हम और आप पहले भी थे अब भी हैं और फिर भी होंगे	२५	
१६.	परमात्मा को याद करना क्यों आवश्यक है ?	२७	
१७.	गीत	२८	
१८.	आध्यात्मिक सेवा समाचार	२९	
१९.	विदेश से प्राप्त ईश्वरीय सेवा समाचार	३१	
२०.	कर्मातीत अवस्था को प्राप्त करने के लिए महामन्त्र	३२	

वर्तमान संगमयुग पर परम पितापरमात्मा शिव आकर आत्माओं की ज्याति जगा रहे हैं, ऐसी संगमयुगी पावन दीपावली की हार्दिक बधाई

सम्पादकीय

सर्वोत्तम सेवा

'सेवा' मानव का एक अच्छा गुण है । सेवा करने वाले मनुष्य का भाव यही होता है कि दूसरों को किसी प्रकार से सुख, शान्ति या आराम मिले । इसी भाव को लेकर ही मनुष्य भिन्न-भिन्न प्रकार की सेवा करते हैं । कोई मनुष्य रोगियों के लिए अस्पताल बनवा देता है और कोई अपाहजों के भोजन के लिए किसी भण्डारे अथवा लंगर की व्यवस्था कर देता है । कोई प्यासों के लिए प्याऊ बनवा देता है तो कोई निर्धन लोगों के बच्चों की निःशुल्क शिक्षा के लिए किसी पाठशाला में प्रबन्ध कर देता है । कोई गृहस्थी पक्षियों और चींटियों-मकोड़ों को ही खाने-पीने के लिए कुछ दाना-पानी डालकर सन्तोष कर लेता है और समझता है कि कुछ सेवा और पुण्य का कार्य वह भी कर रहा है और कोई कहता है कि वह अपने बच्चों की सेवा करके उन्हें ही योग्य बनाने में लगा है ।

सभी प्रकार की सेवा अपनी-अपनी जगह पर अच्छी ही है । परन्तु उपर्युक्त किसी भी प्रकार की सेवा को हम सर्वोत्तम देश सेवा नहीं कह सकते । यह बात हम एक-दो उदाहरणों से स्पष्ट करते हैं ।

मान लीजिये कि कोई धनवान् व्यक्ति एक बहुत बड़ा अस्पताल बनवाता है और उसमें चिकित्सा और चिकित्सकों की भी अच्छी व्यवस्था कर देता है । वहाँ रोगियों के रोग को निवारण करने के लिए सहानुभूति से उनकी देख-भाल भी होती है । परन्तु सभी लोग इस बात को मानेंगे कि इस प्रकार के अस्पताल से सदा के लिए किसी का कायाकल्प हो जाना, मनुष्य की काया का 'कंचन सम' अथवा बिल्कुल निरोगी हो जाना तो असम्भव ही है बल्कि आप देखते हैं कि नित्य नये अस्पताल खुलते रहने से भी मरीजों की भरमार लगी ही रहती है । वास्तव में अस्पताल चलते ही तब हैं जब उनमें काफी संख्या में रोगी आते रहते हैं । **तो संसार में रोग भी बना रहता है, अस्पताल भी बने रहते हैं और उनमें रोगी भी आते रहते हैं, क्या सेवा का इससे अच्छा कोई तरीका नहीं हो सकता जिससे रोग ही मिट जाएँ और अस्पतालों को खोलने की आवश्यकता ही न रहे** ? आप सोचते होंगे कि यदि ऐसा कोई अस्पताल हो सकता है तो निस्सन्देह ऐसा अस्पताल खोलना ही सर्वोत्तम सेवा करना है परन्तु साथ ही साथ आप सोचते होंगे कि मनुष्य को सदा के लिए निरोगी बनाने का तो कोई तरीका अभी तक ज्ञात नहीं है । मनुष्य के लिए कोई ऐसा अमृत तो बना नहीं और कोई ऐसी संजीवनी बूटी तो हाथ लगी ही नहीं जिससे कि मनुष्य का रोग सदा के लिए निवारण हो जाए । परन्तु हम आप को आगे चलकर बताएँगे कि ऐसा भी अस्पताल हो सकता है । पहले हम ऊपर अनेक प्रकार की सेवाओं का जो उल्लेख कर आये हैं, उनमें से एक अन्य प्रकार की सेवा पर भी विचार कर लेते हैं ।

मान लीजिए, कोई व्यक्ति एक भण्डारे अथवा लंगर की व्यवस्था कर देता है ताकि भूखे लोगों को पेट-भर भोजन मिले । इस सेवा के पीछे भी भावना तो अच्छी ही है परन्तु आप यहाँ पर दो बातों पर ध्यान दीजिए । एक तो यह कि भण्डारा भी तभी चलता रहता है जब गरीब लोग वहाँ आकर अन्न दान लेते रहते हैं और दूसरी बात यह कि उस दानी के दान देने से किसी ग़रीब की ग़रीबी तो मिट नहीं जाती और उसका माँगना तो बन्द नहीं होता । बल्कि, कुछ समय के पश्चात् यह चक्कर चलता ही रहता है । इसके अतिरिक्त, यह भी कहा जा सकता है कि अगर हम किसी निर्धन अथवा ग़रीब को धन आदि से मदद करते हैं तो हमें क्या पता है कि वह इस का सदुपयोग करता है और अपनी आवश्यकताओं को पूरा करता है या उसे किसी व्यसन (बीड़ी-सिगरेट इत्यादि) पर ख़र्च करता है । अगर वह धन का सदुपयोग न करके उसे बुरे कामों पर लगाता है तब तो उस धन से और ही पाप और अनर्थ ही फैलेगा । अतः यहाँ भी यही प्रश्न उठता है कि सेवा का ऐसा कौनसा तरीका है जिससे मनुष्य स्वयं ही धन-धान्य सम्पन्न बन जाय और उसे कभी भी किसी के आगे हाथ न फैलाने पड़ें ? उस सच्ची और सर्वोत्तम सेवा का स्वरूप बताने से पहले हम एक और प्रकार की सेवा पर विचार करते हैं ।

आज कुछ लोग गाँव-गाँव में जाकर, वहाँ के लोगों को उनके कर्तव्य और उनके अधिकार बताते हैं, उन्हें साफ-सुथरा रहने की शिक्षा देते हैं, उन्हें खेती के नये तरीके भी समझाते हैं तथा इस प्रकार की अन्यान्य सेवाएँ भी करते हैं । यह कार्य करने वाले लोग स्वयं को 'ग्राम सेवक' मानते हैं । इनके मन में भी यही शुभेच्छा है कि गाँव के लोग अधिक सुखी बनें और हमारा देश एक समृद्धिशाली और सम्पन्न देश बने । हज़ारों-लाखों, ग्राम-सेवक, समाज-सेवक देश-सेवक और नेता इस प्रकार की सेवाओं में लगे हुए हैं । परन्तु आप जानते हैं कि इतने समाज-सेवकों और नेताओं के होते हुए भी देशवासियों के दुःख दूर तो नहीं हो गये, उनके जीवन से रोग और निर्धनता मिट तो नहीं गये । आज भी करोड़ों लोग नंग-धड़ंग रहते हैं, सड़कों के किनारे पर अथवा बाज़ारों के फुट-पाथ पर रात को सोते हैं और भूखे रहकर ही अपने जीवन के दिन काटते हैं । आज ग़रीबी यदि पहले से ज्यादा नहीं हुई तो कम भी नहीं हुई । आज लोगों का न चरित्र ही अच्छा है और न उनकी आर्थिक अवस्था ही अच्छी है । यही भारत जो पहले 'सोने की चिड़िया' था, अब मिट्टी का भी नहीं रहा है । एक समय था कि जब यहाँ अनाज कोड़ियों के मोल बिकता था और जब कोई विदेशी यात्री पानी माँगता था तो उसे पानी की जगह दूध और लस्सी भेंट की जाती थी और आज वह समय है जब अनाज पुड़ियों में बिक रहा है । यहाँ के लोग भी पंक्तियों में खड़े होकर दूध की बोतल लेते हैं और करोड़ों लोगों ने तो सारी आयु में कभी एक बार, एक छटाँक दूध भी शायद नहीं पिया होगा !!

समाज-सेवक और नेता लोग कहते हैं कि वे प्रयत्न तो बहुत करते हैं लेकिन कभी अधिक वर्षा हो जाती है और बाढ़ इत्यादि के कारण खेती नष्ट हो जाती है और गाँवा डूब जाते हैं और कभी वर्षा होती ही नहीं और खेती सूख जाती है और कभी टिड्डी दल फ़सल को खा जाता है तो कभी अन्य किसी कारण से देश की हालत सुधर नहीं पाती । वे कहते हैं कि देश के लोगों में भी भ्रष्टाचार फैला हुआ है जिस कारण से देश सुखी नहीं हो पाता । स्पष्ट है कि उनके सेवा कार्य में भी वह बल नहीं है जिससे कि देश के लोगों का चारित्रिक स्तर भी ऊँचा उठे, प्राकृतिक प्रकोप भी न हों और देश में फिर सुख-शान्ति के दिन लौट आयें ।

अत: सच्ची और सर्वोत्तम सेवा वह है जिससे मनुष्य को स्थायी और सम्पूर्ण सुख, स्वास्थ्य तथा शान्ति की प्राप्ति हो तथा वह फिर कभी भी दु:खी और अशान्त न हो । यह सच्ची सेवा है मनुष्य को मनुष्य बनाने की, उसमें दिव्य गुण भरने की, उसके कर्मों को श्रेष्ठ और सबल बनाने की, उसका नैतिक स्तर ऊँचा करने की, उसकी आत्मा में जागृति लाने की । जब तक मनुष्य के कर्म खोटे हैं तब तक उसे वस्तुएँ भी मिलावट और खोट वाली ही मिलेंगी । जब तक मनुष्य का मन स्वयं सत्य के अनुशासन में नहीं है तब तक प्रकृति भी न सतोप्रधान हो सकती है, न प्रकृति के तत्व ही अनुशासन में रह सकते हैं; तब तक अतिवृष्टि और अनावृष्टि द्वारा पीड़ा मिलती ही रहेगी । जब तक मनुष्य नियमों को तोड़ता रहेगा तब तक स्वास्थ्य भी उससे मुख मोड़ता रहेगा । अत: मनुष्य को आज वह सहज ज्ञान देने की आवश्यकता है जिससे वह एक ऊँची किस्म का मनुष्य बने, उसके संस्कार और विचार, उसका आचार और व्यवहार बदले । उसके फलस्वरूप उसे सुख मिलेगा ही, तब उसे दु:ख में कोई नहीं धकेल सकेगा । वह ईश्वरीय ज्ञान ही अमृत है जिससे उसका काया-कल्प हो जाएगा, वह ज्ञान ही संजीवनी बूटी है जिससे उसके मृत प्राय: आध्यात्मिक जीवन में नया जीवन जाग उठेगा ।

अत: आज ऐसे आध्यात्मिक अस्पताल खोलना ही सच्ची और सर्वोत्तम सेवा करना है जहाँ ईश्वरीय ज्ञान और योग द्वारा मनुष्य के पुराने संस्कारों का रोग नष्ट हो जाए और काम-क्रोधादि विकार सदा के लिए मिट जाएँ और मनुष्यात्मा राज्य-भाग्य की और स्वास्थ्य-सम्पत्ति की अधिकारी बन जाए । आज रूहानी समाज-सेवकों (Spiritual Social-workers) की आवश्यकता है जो स्वयं अपने जीवन में ईश्वरीय ज्ञान, योग और दिव्य गुणों की धारणा करके ग्राम-ग्राम में, नगर-नगर में जन-जन को "पवित्र बनो और कर्म-योगी बनो" का ईश्वरीय सन्देश दें ! तब निश्चय ही ये देश फिर से स्वर्ग बन जाएगा ।

आज ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व-विद्यालय ऐसा विद्यालय है, जहाँ मनुष्य को ईश्वरीय ज्ञान तथा सहज राज योग द्वारा पवित्र और योग-युक्त बनने की शिक्षा दी जाती है । इससे मनुष्य न केवल इस जीवन में शान्ति और आनन्द प्राप्त कर लेता है बल्कि भविष्य में भी स्थायी स्वास्थ्य, सम्पूर्ण सुख और शान्ति अथवा जीवन्मुक्ति प्राप्त कर लेता है । अत: ये विश्व-द्यिालय एक प्रकार के आध्यात्मिक अस्पताल भी हैं जहाँ ज्ञान के इन्जेक्शन द्वारा आत्मा के मनोविकार नष्ट होते हैं । ये एक प्रकार के आध्यात्मिक भोजनालय भी है जहाँ आत्मा की जन्म-जन्मान्तर की सुख और शान्ति की भूख की तृप्ति होती है । हर एक नर-नारी को चाहिए कि वह इस ईश्वरीय ज्ञान और योग से लाभ उठाकर अपने जीवन को सफल करे और फिर दूसरों की भी तन, मन, धन से यह अलौकिक सेवा करे । सरकार को भी चाहिए कि इस ईश्वरीय विश्व-विद्यालय को अपने कार्य में सहायक मानकर हर प्रकार से सहयोग दें क्योंकि यह ईश्वरीय विश्व-विद्यालय ही वास्तव में रामराज्य, जिसे बापू गांधी जी भारत में स्थापित करना चाहते थे, अब भारत में उसकी पुन: स्थापना कर रहा है ।

राम और रावण का परिचय (पृष्ठ ४ का शेष)

त्यौहार मनाया जाता है और बाद में राम की ताजपोशी की याद में दीपावली का त्यौहार आता है ।

राम राज की आशा

अत: गांधीजी की भी राम राज्य की आशा तभी पूरी होगी जब 'दीपावल' आयेगी अर्थात् मनुष्यात्मा रूपी दीपक जग जाएँगे । आत्मा रूपी दीपक तभी जगेंगे जब विजयदशमी मनाई जा चुकेगी अर्थात् माया रूपी रावण का विध्वंस हो चुकेगा । इसलिए यदि आप रामराज की आशा को पूर्ण करना चाहते हैं तो राम के समान पुरुषार्थ का धनुष धारण करके माया रूपी रावण को तथा आसुरी लक्षणों की सेना का विध्वंस करो तो राम का राज-तिलक होगा और 'राम राज' के सुहावने दिन लौट आएँगे । जन्म-जन्मान्तर 'राम-राज की जय' तो बोलते ही आये हैं, अब स्वयं भी मनोविकारों पर जय प्राप्त करने का पुरुषार्थ करना चाहिए । प्रतिदिन "मुझे अपनी शरण में ले लो राम" तो कहते हैं, अब तो 'काम' की शरण छोड़कर उस निराकार राम की शरण ले ही लेनी चाहिए वरना "अन्त समय पछताओगे, जब प्राण जायेंगे छूट ।"

राम और रावण का परिचय

यह जो दो अक्षरों का नाम 'राम' है, इसका भारत में बहुत महात्म्य है । भारत के बहुत से लोग तो प्रात: उठते ही राम नाम की माला फेरने लगते हैं । कई लोग जब रास्ते में जाते हुए परस्पर मिलते हैं तो भी "राम-राम" कहकर एक-दूसरे का कल्याण-कुशल पूछते और अभिवादन करते हैं । कई घरों में तो यह भी परम्परा चली आती है कि जब बच्चा पैदा होता है तो वे उस नव-जात शिशु की जीभ पर ही 'राम' शब्द लिख देते हैं । अन्त में भी जब मनुष्य की अरथी उठाई जाती है तो लोग "राम नाम सत् है" कहते हुए ही श्मशान पर जाते हैं । अत: प्रश्न उठता है कि 'राम कौन है,' उनको मनुष्य क्यों इतना याद करते हैं ? यूँ तो लोगों ने सारी रामायण कई बार सुन ली है परन्तु प्रश्न है कि क्या यह सचमुच जान भी लिया है कि राम कौन है ?

भक्त लोग कहते हैं कि राम पतित पावन हैं । वे खेवनहार और तारनहार भी हैं । "सभी के दाता राम; राम सँवारे काम", ऐसा भी वे कहते हैं । अत: स्वयं से पूछना चाहिए कि क्या हम पतित से पावन बनते जा रहे हैं ? क्या हमारे जीवन की नाव इस विषय सागर से पार होती जा रही है ? क्या हमारे सब काम सँवर रहे हैं और हमें सम्पूर्ण पवित्रता, सुख और स्वास्थ्य तथा शान्ति और सम्पत्ति की प्राप्ति हो रही है ? यदि नहीं हो रही तो सिद्ध है कि हमने भले ही सारी रामायण सुन ली है परन्तु यह पूछना बाकी है कि राम कौन थे और रावण कौन था ! अभी राम की और रावण की जीवन कहानी को नहीं जानते और उनके साथ जो हमारा सम्बन्ध होना या नहीं होना चाहिए वह भी नहीं जानते । यदि हम उस पतित-पावन राम को जानते होते और उससे हमारा ठीक सम्बन्ध जुटा होता और यदि रावण को हम शत्रु भी मानते तो हमें प्राप्ति भी अवश्य होती; तभी तो राम की महिमा सिद्ध होती !"

राजा राम और राज्य के दाता राम में अन्तर

हम अनुभव के आधार पर कह सकते हैं कि वास्तव में राम दो हैं । एक हैं त्रेतायुग के चौदह कला सम्पूर्ण राजा राम और दूसरे हैं राज्य-भाग्य के दाता राम जिनकी कलाओं का प्रश्न ही नहीं उठता और जो कि सदा निर्लिप्त हैं । इसलिए उन्हें 'रामेश्वर' कहा गया है । दक्षिण भारत में रामेश्वरम् नाम से उनकी याद में मन्दिर भी है । उन्हें ही 'शिव' भी कहा जाता है । वह अशरीरी अथवा अकाय (Incorporeal) हैं जबकि त्रेता युग वाले 'दशरथ-पुत्र' राम शरीरधारी हैं । 'रामनवमी' का त्यौहार त्रेतायुग के राजा राम के शारीरिक जन्म की याद में मनाया जाता है जबकि 'शिवरात्रि' का त्यौहार रामेश्वरम् (शिव) के 'अवतरण' की याद में मनाया जाता है । त्रेतायुग के राम पावन राम हैं परंतु रामेश्वर अर्थात् अशरीरी शिव पतित-पावन हैं । पावन राजाराम के रामराज्य का बहुत गायन है क्योंकि उसमें अपार सुख-शान्ति थी परन्तु रामेश्वर अर्थात् परमात्मा शिव **रंक को राजा बनाने वाले और सुख-शान्ति के दाता** अथवा **'स्थापक'** हैं । रामायण में उन दोनों की जीवन कहानी को मिला-जुला दिया गया है और लोग उसका आध्यात्मिक तथा अलौकिक अर्थ भी नहीं जानते बल्कि वे लौकिक और भ्रान्तिपूर्ण अर्थों पर अड़े हुए हैं ।

अयोध्या में हुए अति प्रसिद्ध राजा का जो "राम" नाम है, वह तो उनके दैहिक जन्म का नाम है परन्तु अशरीरी (निराकार) परमात्मा को 'राम' नाम इसलिए दिया गया है कि वे रमणीय हैं अर्थात् उनके गुण तथा कर्तव्य मन को लुभाने वाले हैं । परमात्मा का यह नाम 'रावण' की अपेक्षा में ही प्रसिद्ध है । 'रावण' का अर्थ है—'रुलाने वाला' । 'रावण' माया, अधर्म अथवा पाँच विकारों ही का नाम है क्योंकि विकारों तथा अधर्म के परिणामस्वरूप ही मनुष्य दु:खी होता है । परमात्मा मनुष्य को धर्मात्मा अथवा पावन बनाने हैं और सुखी करने हैं, इसलिए वह शिव (कल्याणकारी) अथवा 'राम' (लुभाने वाले) हैं । माया रूपी रावण का नाश करके, आत्माओं रूपी सीताओं को छुड़ाने वाले तथा उनके सभी काम सँवारने वाले अर्थात् धर्म स्थापना करके सुख की बेल लगाने वाले निराकार परमात्मा ही 'दाता' राम हैं ।

वास्तव में यह कलियुगी दु:खी संसार ही काँटों का वन है और यह शरीर ही पंचवटी है । इसमें आत्मा रूपी सीता रहती है । **मन में लक्ष्य** को धारण करने की जो आज्ञा है वही **लक्ष्यमण** की खींची हुई लकीर है जिसका उलंघन करना आत्मा रूपी सीता के लिए मना है । माया रूपी रावण और किसी तरह न फुसला सकने पर भिखारी के वेश में भी आता है और सीता रूपी आत्मा उसे न पहचानकर रावण द्वारा बन्दी बना ली जाती है । इस प्रकार सर्व आत्माओं के धर्म की हानि होने पर वह अशरीरी राम (रामेश्वर अर्थात् परमात्मा शिव) मनुष्य शरीर धारण करके (उसमें प्रविष्ट हो के) 'सीताओं' को रावण (माया) से मुक्त करने का दिव्य कर्म करते हैं । उस समय के धर्महीन बानर-सम विकारी मनुष्यों के वह परम नेता अथवा निदेशक बनकर पत्थरबुद्धि आत्माओं द्वारा ही इस संसार सागर पर तैरता हुआ ज्ञान-पुल बनवाते हैं जिसके साधन से वे माया रूपी रावण का अन्त करते हैं । संक्षेप में यह है निराकार राम की जीवन-कहानी ।

जिसने निराकार राम (रामेश्वर) की उपासना (योग) द्वारा शक्ति लेकर संसार सागर को पार किया और मन रूपी लंका से माया रूपी रावण का नाश किया, उसने चन्द्रवंश में राजपद प्राप्त किया अर्थात् वह राजा राम बना । इस वृत्तान्त की याद में आज तक भी विजयदशमी का

(शेष पृष्ठ ३ पर)

तुम शान्ति के अवतार हो

ब्र.कु. सूरज कुमार, आबू

हर मन में तनाव, हर आँगन में बिखराव, हर जीवन में संग्राम, हर समाज में टकराव, हर देश में घबराव व अन्तर्राष्ट्रीय भय व्याप्त है । मानव यह भूलता जा रहा है कि जीवन में सम्पूर्ण शान्ति भी हो सकती है । चाँद तारों पर झण्डे लहराने के स्वप्न तो वह देख रहा है, परन्तु सभी के मन के झण्डे निशि-दिन झुकते जा रहे हैं । अशान्ति के काले बादल चहुँ ओर व्याप्त हैं, शान्ति मृग तृष्णा बन कर रह गई है । ऐसे विकराल काल में परम पिता, शान्ति का सागर, शान्ति का पथ दर्शाने हमारे मध्य उपस्थित हैं । उसने अपने शान्ति के दूत चारों ओर दौड़ाएँ हैं । वे केवल स्वयं ही नहीं अवतरित हुए हैं, बल्कि अनेक शान्ति की अवतार आत्माएँ भी उनके साथ इस धरा पर अवतरित हुई हैं । जो चारों ओर शान्ति का सन्देश दे रही हैं । क्योंकि कोई अन्य नहीं बल्कि शान्ति-सागर के वत्स ही स्वयं अशान्त हुए हैं । अत: उन वत्सों को शान्ति की राह पर लाना उस परम पिता का ही तो कर्त्तव्य है । इस दिव्य कर्त्तव्य के लिए उसने अनेक महान आत्माओं को शान्ति का अवतार, पवित्रता का अवतार व शक्ति-अवतार बना कर कहा—"बच्चे जाओ . . . और समस्त विश्व में सुख, शान्ति व पवित्रता का राज्य स्थापित करो; माया के किटाणुओं को अपने तेज से भस्म कर दो ।"

अब परम पिता के शान्ति दूत सम्पूर्ण विश्व में फैल चुके हैं । वे अपने कार्य में संलग्न हैं . . . उन्हें अनेक मायावी शक्तियों से युद्ध करना पड़ रहा है . . . परन्तु विजय उनकी ही है । हम देख रहे हैं कि विश्व के बड़े बड़े नेता, किसी भी तरह शान्ति लाने में असफलता का मुँह देखते जा रहे हैं . . . कुछ ही समय में ये सब शान्ति के इच्छुक निराश हो जाऐंगे और तब उन्हें एहसास होगा कि शान्ति स्थापित करना किसका कार्य है ।

परमपिता के साथ हम अवतरित हुई आत्माएँ, कभी कभी स्वयं के अवतरित स्वरूप को भूल जाती हैं । तो प्रस्तुत चर्चा में हम राजयोगियों के लिए इस तथ्य की विस्तृत चर्चा करेंगे कि हम कैसे स्वयं को शान्ति का, पवित्रता का व शक्ति का अवतार अनुभव करके कर्म क्षेत्र पर चलें । हम इसका अभ्यास कैसे करें . . . और चिन्तन कैसे करें . . . यदि राज योगी आत्माएँ थोड़ा भी अन्तर्मुखी होकर इस रहस्य का गहन चिन्तन व अभ्यास करेंगे तो सहज ही उन्हें अशरीरी पन की दिव्य अनुभूति होगी और आध्यात्मिकता का पथ सम्पूर्ण सरल अनुभव होगा ।

ईश्वरीय महावाक्य है—**"जैसे मैं परमधाम से इस पराये तन में अवतरित हुआ हूँ, वैसे ही तुम भी अनुभव करो कि मैं आत्मा भी परमधाम से इस अपने तन में अवतरित हुई हूँ"** ।

तो प्रतिदिन प्रात: आखँ खुलते ही अभ्यास करो—

"कि मैं आत्मा परमधाम में अपने परम पिता के साथ बैठी हूँ" फिर मेरे प्राणेश्वर परम पिता बोले—जाओ बच्चे, धरा पर वह देह रूपी वस्त्र तुम्हारे लिए तैयार है . . . तुम उसमें प्रवेश करो । और तुम अकेले नहीं, मैं भी तुम्हारे साथ चलता हूँ . . .

और मैं आत्मा परम धाम से उतरते उतरते इस देह रूपी रथ में आकर बैठ गई . . . मैं माया के विश्व में अवतरित हो गई . . .

अब प्यारे शिव बाबा बोले—

"देखो बच्चे, तुम शान्ति के अवतार हो । तुम्हें इस देह में बैठकर देवी देवता धर्म की व दैवी साम्राज्य की स्थापना करनी है । जाओ, चारों ओर विचरण करो और अपना दिव्य कर्त्तव्य पूर्ण करो . . . परन्तु यह न भूलना कि तुम अकेले नहीं हो, मैं तुम्हारे साथ हूँ । क्योंकि इस माया के राज्य में चारों ओर अशान्ति है, अपवित्रता की ये रंग बिरंगी दुनिया है ।"

इस प्रकार के अभ्यास से अशरीरी स्थिति हो जाऐगी और बहुत ही गहन शान्ति का अनुभव होने लगेगा । ऐसा अनुभव होगा कि मैं आत्मा इस देह कुटी के अन्दर बैठकर नयनों द्वारा बाहर के दृश्य देख रही हूँ ।

इससे सहज ही साक्षी भाव अनुभव होने लगेगा । हमें लगेगा कि इस देह में बैठकर एक नाटक की तरह हम इस विश्व के अनेक दृश्य देख रहे हैं ।

मैं आत्मा इस विश्व में अवतरित हुई हूँ और मुझे अपना कर्त्तव्य करके वापिस जाना है—इससे सहज ही उपरामता व न्यारापन आ जाऐगा ।

- मैं आत्मा अकेली आई हूँ—यह स्मृति दैहिक नातों के ममत्व को समाप्त कर देगी ।
- मैं परमधाम से सम्पन्न आत्मा आई हूँ—यह स्मृति पुराने संस्कार व पुरानी स्मृतियों से मुक्त कर देगी ।
- मैं आत्मा इस देह में मेहमान बन कर आई हूँ और मुझे अपना कर्त्तव्य करके जाना है—यह स्मृति देह के आकर्षण से मुक्त कर देगी ।

इस प्रकार अवतरित आत्मा समझने से हम स्वयं को इस पराये विश्व में विचरण करता हुआ सा अनुभव करेंगे ।

और क्योंकि हम बहुत ही महान कार्य के लिए अवतरित हुई हैं अत: कोई भी कष्ट हमें कष्ट नहीं लगेगा । दूसरों द्वारा की जाने वाली ग्लानि हमें प्रभावित नहीं करेगी ।

इसके बाद हम इस प्रकार चिन्तन करें . . .

मैं शान्ति का अवतार हूँ—

- मुझे शान्ति के सागर ने शान्ति सम्पन्न बनाकर भेजा है . . . मैं शान्ति का भण्डार हूँ . . .
- मुझे शान्ति स्थापित करनी है, इसलिए मेरा प्रत्येक संकल्प, बोल, कर्म और व्यवहार, चारों, ओर शान्ति का वातावरण बनाये ।
- मुझे ज्ञात है कि चारों ओर घोर अशान्ति व्याप्त है . . . प्रत्येक मनुष्य के बोल, दृष्टि व व्यवहार अशांति पैदा करने

वाले हैं . . . प्रत्येक मनुष्य का मन तनाव से भरा है, और मैं शान्ति स्थापनार्थ आया हूँ अत: किसी भी तरह की अशान्ति मुझे छू नहीं सकती किसी के कटु वचन व दुव्यवहार मेरी शान्ति को भंग नहीं कर सकते ।

● मुझे अपनी दृष्टि से भी शान्ति स्थापित करनी है . . . मेरे नयनों से चारों ओर शान्ति के प्रकम्पन प्रवाहित हों ।

इस प्रकार का चिन्तन हमें शान्ति-सागर के तले में ले चलेगा । हमें याद रहेगा कि हमारा कर्त्तव्य शान्ति स्थापित करना है । इससे हमारी शान्ति भी अति शक्तिशाली हो जाऐगी और किसी भी तरह व किसी भी मनुष्य द्वारा भंग नहीं होगी ।

मैं पवित्रता का अवतार हूँ—

इस प्रकार चिन्तन करें कि—

● पवित्रता के सागर परमात्मा ने मुझे सम्पूर्ण पवित्रता का वरदान देकर इस देह में भेजा है ।

● मुझे पूरा एहसास है कि यहाँ चारों ओर माया का साम्राज्य है, मनुष्यों के अंग अंग क्रिमिनल हैं, मनुष्य की दृष्टि, वृत्ति-कृति सब पतित हैं । परन्तु मुझे यह भी याद है कि इस विकारों से लिप्त विश्व को पावन बनाने के लिए ही मैंने अवतार लिया है ।

● मुझे अपनी पावन दृष्टि व वृत्ति से सभी को पवित्रता की ओर प्रेरित करना है । मेरा प्रत्येक संकल्प पवित्रता की तरंगें फैलाये ।

● अवतार के कर्म दिव्य होते हैं । अत: मेरा हर कर्म दूसरों को पवित्रता का साक्षात्कार कराये ।

● मैं कमज़ोर नहीं, शक्ति शाली हूँ । अत: संसार की कोई भी अपवित्रता मुझे विचलित नहीं कर सकती । मनुष्यों की कोई भी चंचलता मुझे चलायमान नहीं कर सकती, दूषित वातावरण मुझे छू नहीं सकता ।

● मैं पवित्रता के प्रकाश के अन्दर हूँ । मेरे सिर पर पवित्रता का ताज है । मैं सम्पूर्ण पवित्र आत्मा इस देह-गुफा में बैठी हूँ और चारों ओर पवित्रता की तरंगे फैला रही हूँ ।

इस प्रकार स्वयं को पवित्रता का अवतार समझ कर इस मायावी विश्व में विचरण करने से हमारा जीवन पवित्रता की चेतन मूर्ति बन जाऐगा । बार बार के इस अभ्यास से आत्मा सम्पूर्ण पवित्रता की ओर बढ़ती चलेगी और पवित्रता का बल ईश्वरीय कार्य में सर्वाधिक सहयोगी देगा ।

मैं शक्ति-अवतार हूँ—

प्रति दिन एकान्त में बैठकर इस प्रकार चिन्तन करें—

● जिन शक्तियों की यादगारें चली आ रही हैं कि वे असुर-संहार वे लिए अवतरित हुई थीं, वे मैं ही हूँ ।

● मुझे सर्व शक्तिवान ने सर्व-शक्ति सम्पन्न करके भेजा है कि जाओ और असुरों का संहार करो ।

● और सर्व शक्तिवान बाप भी मेरे साथ आया है ।

● मुझे पता है कि चारों ओर भयंकर रूपधारी असुर, विशाल बाहें फैलाए हमें हप करना चाह रहे हैं । माया के किटाणु चारों ओर फैले हैं परन्तु मुझे सर्व शक्तिवान की शक्तियों की किरणों से सभी को नष्ट करना है । और इस धरा से असुरों के साम्राज्य को नष्ट करके दैवी-साम्राज्य की स्थापना करनी है ।

● मैं असुर-संहारनी हूँ, अत: मुझे असुरों का भय क्यों . . .

● मुझे अनेक आत्माओं को माया से मुक्त कराना है, उन्हें शक्ति देनी है, मैं यह नहीं कह सकती कि मैं कमज़ोर हूँ

● मैं शक्ति हूँ अत: मुझे कोई दुख नहीं हो सकता ।

इस प्रकार का चिन्तन हमें अति शक्तिशाली आत्मा बना देगा हमारे अन्दर छुपा भय नष्ट हो जाऐगा और आसुरी शक्तियों को चुनौती देने का साहस आ जाएगा । हम निर्भय होकर, बेगमपुर के बादशाह की तरह इस पराये राज्य में विचरण करेंगे ।

इस प्रकार अभ्यास करने से सभी चिन्ताएँ मिट जाऐंगी । सहज ही अशरीरी-पन का दिव्य अनुभव होगा । साथ साथ यह भी अनुभव होगा कि सर्वशक्तिवान की शक्तियाँ हमारे साथ हैं । हम थोड़े से समय के लिए इस विश्व में अवतरित हुए हैं, अब हमें शीघ्र ही अपने देश चले जाना है । इस तरह पुरुषार्थ सरल होगा । कठिनाइयों के लिए साक्षी भाव हो जाएगा और हमारे कर्मों में सहज ही दिव्यता आ जाऐगी ।

(पृष्ठ ७ का शेष)

पिता ने अब अपने पहले दोनों बेटों की ओर मुड़कर देखा । दोनों की गर्दन शर्म से झुकी हुई थी । पिता ने उनसे कहा, तुम ही बताओ कि मुझे क्या फैसला करना चाहिए । दोनों बेटों ने कहा—"पिताजी, हम बहुत शर्मिन्दा हैं । फैसला तो स्पष्ट ही है" फिर छोटे भाई की ओर इशारा करते हुए उन्होंने कहा—"राज्य-अधिकारी इसी को ही बनाया जाना चाहिए । अपनी बुद्धिमता के कारण ही इसने विजय प्राप्त की है ।"

यह सुनकर पिता ने घर की चाबियां छोटे बेटे के हाथ में सौंप दी और कहा—"बस, अब तुम सब संभालो । मैं अपना अन्तिम समय प्रभु-भजन में व्यतीत करुँगा ।"

तो देखा बच्चो, किस प्रकार अपनी सूझ-बूझ के कारण छोटा भी बड़ा बन गया । इसी प्रकार परमात्मा भी हमको कहते हैं कि चाहे कोई, छोटा है या बड़ा, ज्ञान की शिक्षा लेते हुए उसे कई वर्ष हो गये हों या कुछ दिन, परन्तु अपने श्रेष्ठ कर्मों के आधार पर, ज्ञान-योग की शिक्षा व श्रेष्ठ तथा तीव्र पुरुषार्थ के आधार पर सतयुग में उच्च पद का अधिकारी हो सकता है । शिव बाबा के शब्द हैं—'लास्ट सो फास्ट' । या 'बड़े तो बड़े, छोटे मियां सुभानाल्ला" । परमात्मा अपना फैसला हमारे कर्मों के आधार पर ही करते हैं ।

□

फैसला

ले. ब्र.कु. चक्रधारी, दिल्ली

भारत के एक नगर में एक अत्यन्त बुद्धिमान राजा राज्य करता था । वह कोई भी कार्य करता, उसको भली-भाँति सोच-समझ कर, उस कर्म का परिणाम सोच कर ही करता । उसकी निर्णय शक्ति परख शक्ति बहुत प्रबल थी । शहर के बहुत-से लोग उससे अपनी घरेलू समस्याओं का समाधान लेने आया करते । वह अपनी बुद्धिमता से सभी को सन्तुष्ट करके भेजा करता । इस प्रकार पूरे नगर में वह इस विशेषता के कारण प्रसिद्ध हो चुका था ।

दिन बीतते गये, समय गुजरता गया और वह बहुत बूढ़ा हो गया । परन्तु उसकी बुद्धि क्षीण नहीं हुई । दिनोंदिन वह अधिकाधिक अनुभवी हो गया था । उस राजा के तीन पुत्र थे परन्तु तीनों पुत्रों में रात-दिन का अन्तर था । तीनों बेटे एक ही महौल में पले थे, परन्तु, जैसा कि हम जानते हैं एक आत्मा का संस्कार हूबहू दूसरी आत्मा से मिल नहीं सकता, इसी अनुरूप वे भी एक-दूसरे से एकदम भिन्न थे । बूढ़े राजा के सामने एक प्रश्न उठ खड़ा हुआ । वह सोचता था कि मरने से पहले ही इन सबको अपना-अपना कार्य-भार सौंप दूँ ताकि मैं निश्चिन्त हो इस संसार से विदा ले सकूँ । परन्तु प्रश्न था कि किसको उत्तराधिकारी बनाया जाए । वह तीनों में से किसी को नाराज भी नहीं करना चाहता था परन्तु बुद्धिहीन बेटे को राज्य-अधिकारी भी नहीं बनाना चाहता था ।

विचार करने पर उसको एक युक्ति सूझी । उसने तीनों बेटों को अपने पास बुलाया और कहा—"देखो, मैं बहुत बूढ़ा हो गया हूँ । इस दुनिया में चन्द ही रोज का मेहमान हूँ । इस संसार से जाने से पहले मैं चाहता हूँ कि आप तीनों में से एक को राज्य-अधिकारी बना दिया जाए ।"

तीनों बेटे बहुत ध्यान पूर्वक अपने पिता की बात सुन रहे थे ।

पिता ने उनको शान्त मुद्रा में देख अपनी बात को आगे बढ़ाते हुए कहा, "मैं बुद्धिमता, समझ और सूझ-बूझ के हिसाब से ही यह निर्णय करना चाहता हूँ ।" यह कहकर राजा ने उन तीनों को सौ-सौ रुपये दिये और कहा कि "घर के पिछले भाग में जो तीन बड़े-बड़े कमरे खाली पड़े हैं, आप तीनों को उन कमरों को इस सौ-सौ रुपये के लाये गए सामान से भरना है । जिसका ढंग सबसे अच्छा होगा, उसे ही राज्य-अधिकारी नियुक्त किया जाएगा ।

फिर पिता ने आगे कहा कि "आप तीनों को एक सप्ताह का समय देता हूँ । उस दौरान आप सोच लेना कि हम अपने-अपने कमरे को किस-किस चीज से भरें ।"

तीनों पुत्रों ने हामी भरी और सौ-सौ रुपये लेकर अपने अपने कमरे में चले गये । एक सप्ताह बीतते समय भी न लगा । वे तीनों अपना कार्य पूरा कर चुके थे और सोच रहे थे कि देखें आज फैसला किसके हम में होता है ।

कुछ ही देर में पिता ने उन तीनों को बुलवा भेजा और कहा—"चलो, अपना-अपना कमरा दिखाओ कि तुमने उसे किस वस्तु से भरा है ।"

सब घर के पिछले भाग की ओर बढ़ चले । सबसे पहले पिता ने अपने ज्येष्ठ पुत्र को कहा कि खोल कर दिखाओ, तुम्हारा कमरा किस प्रकार से भरा हुआ है । पुत्र ने जब कमरा खोला तो गली-सड़ी चीजों की बदबू से दम-सा घुटने लगा । उसने सोचा था कि सौ रुपये में ऐसा कौन-सा सामान आ सकता है जिससे इतना बड़ा कमरा भर जाए । उसे कुछ और न सूझा तो वह रद्दी बाजार से १०० रुपये में गला-सड़ा सामान भर कर ले आया और कमरा उससे भर दिया । पुत्र की बेसमझी पर वह बुद्धिमान राजा बहुत ही शर्मिन्दा हो रहा था और पुत्र इस नशे में था कि मैंने १०० रुपये में कमरा भर दिखाया ।

अब दूसरे बेटे की बारी थी । पिता ने अब उसे आज्ञा दी कि वह अपना कमरा खोल कर दिखाये । उस ने अपनी समझ के अनुसार सारा कमरा गाय-भैंस को डालने वाले घास-भूसा और चारे से भर दिया था । सारा कमरा इस कदर भरा हुआ था कि उसके अन्दर कोई जा भी नहीं सकता था लेकिन फिर भी वह पहले कमरे से बेहतर था ।

छोटा बेटा तो पहले से ही तैयार था । इसी इन्तजार में था कि पिताजी मुझे आज्ञा करें और मैं दरवाजा खोलूं । पिताजी की आज्ञा मिलते ही उसने झट दरवाजा खोला । आ. . . हा. . . सारा कमरा प्रकाश से व अगरबत्ती की भीनी-भीनी सुगन्ध से महक रहा था । इस बेटे ने कमरे में ४-५ स्थानों पर दीपक और अगरबत्तियाँ जगा कर रख दी थीं जिससे सारा कमरा प्रकाशित था और सुगन्ध से भरपूर था । १०० रुपये में से थोड़े से रुपयों का ही यह सामान आया था । बाकी बचे हुए पैसों में से वह २-३ चटाईयाँ और कुछ फल आदि खरीद लाया था । उसने अपने पिता और दोनों भाइयों को कमरे में प्रवेश करने को कहा और फिर सबको फल काट कर खिलाया ।

(शेष पृष्ठ ६ पर)

रात और दिन

सूर्य अस्त होते ही अंधेरा होने लगा । कुछ ही समय में अंधकार छा गया और 'रात्रि का पहर' शुरू हो गया—

तब बुढ़िया ने अपनी झोंपड़ी में 'दीवा' जला लिया, और उसके पड़ोसियों ने भी अपने-अपने 'दीपक' और 'लालटेन' जला लिए, पहरेदारों ने टार्च निकाल लिए ।

गाँव तथा पटरी के दुकानदारों ने 'गैस' जला दिये, शहरों में, रास्तों, घरों, दुकानों और फ़ेक्ट्रियों में बिजली के अनेकों बल्ब अथवा ट्यूब जग उठे ।

मतलब यह कि सबने कुछ-न-कुछ रोशनी का साधन कर लिया ताकि रात्रि में कुछ-न-कुछ कार्य-व्यवहार चल सके ।

कुछ बत्तियाँ तो रात्रि के पहर में ही मनुष्यों के सो जाने पर अथवा तेल-ईंधन समाप्त होने पर बुझ गईं । परन्तु सूर्योदय होने पर सभी बत्तियाँ बुझा दी गईं । यदि दिन में किसी व्यक्ति की बत्ती भूल से जलती रह भी गई तो उसके हितैषी सज्जनों ने उसे जतलाया कि "भाई, आप की बत्ती जलती रह गई है, दिन निकल आया है, अब इसे बुझा दीजिये ।"

ठीक इसी रीति, इस बेहद सृष्टि-चक्र में सत् युग और त्रेता युग (ब्रहमा का दिन) २५०० वर्ष में पूरा हुआ, भारतवासी देवी-देवता पुण्य क्षीण होने पर वाम-मर्गिय बने । उनमें माया (काम, क्रोध आदि विकारों) की प्रवेशता हो गई और द्वापर युग तथा कलियुग रूपी २५०० वर्ष की 'ब्रहमा की रात्रि' का पहर शुरू हो गया—

तब भारतवासी पूज्य देवतायें स्वयं ही पुजारी बन गये । वे 'हिन्दू' कहलाने लगे और उन्होंने पूजा करना आरम्भ कर दिया और मनुष्यों ने वेद-शास्त्र बनाये और उन्हें पढ़ने लगे ।

अन्य कई सन्यासी बन गये, उन्होंने गृहस्थ-व्यवहार को छोड़ दिया, जप, तप, दान, पुण्य आदि अनेक प्रकार के कर्म-कांड प्रचलित हो गये, मनुष्यों ने पाप धोने के लिए गंगा आदि पानी की नदियों को पतित-पावनी मानकर स्नान करना शुरू कर दिया ।

कई मनुष्यों ने अन्य मनुष्यों को ही 'सद्गुरु' माना और उसके शिष्य बन गये । मतलब यह कि सबने कुछ-न-कुछ साधन अपनाये, ताकि कुछ-न-कुछ अल्प-काल के लिए ही सही, शान्ति और सुख की प्राप्ति रहे ।

कई तो विकारों में लिप्त होकर माया की कुम्भकर्णी निद्रा में पूरी तरह ही सो गये । अन्य कई भक्ति द्वारा कुछ प्राप्ति होती न देख श्रद्धा खो बैठे । परन्तु कलियुग के अन्त में तो भक्तिमार्ग को पूरा होना ही है क्योंकि तब 'ब्रहमा की रात्रि' का पहर पूरा होने पर, पाप का घड़ा भर जाने पर, ज्ञान-सूर्य परमात्मा 'शिव' प्रजापिता ब्रहमा के शरीर रूपी रथ में अवतरित होकर गीता-ज्ञान सुनाकर मनुष्यात्माओं को योग-युक्त करके, पुन: सतयुग की स्थापना करते हैं ।

अब वही प्रभात का अथवा कलियुग-सतयुग के संगम (Confluence) का समय आ चुका है । आप के शुभ-चिन्तक होकर हम ब्रहमाकुमार और ब्रहमाकुमारियाँ आपको कह रहे हैं कि "जागो-जागो, ज्ञान-सूर्य परमात्मा आ चुका है । अब भक्ति-मार्ग की बत्तियाँ बन्द कर दो, क्योंकि अब ज्ञान-सूर्य परमात्मा उदय हो चुका है । अब जागकर उसके ज्ञानप्रकाश से नयी प्रेरणा, नई उमंग और नया जीवन प्राप्त करो । अब सूरज को चिराग मत दिखाओ !"

योगी होगा नहीं वियोगी

लेखक :ब्रहमाकुमार आनन्द जालन्धर

न्यारा प्यारा साक्षी उपराम
कमल-फूल सा वो अभिराम ।
शान्त मधुर गहर गम्भीर
योगी होगा नहीं अधीर ।।

अचल अडोल अल्प आहारी
निर्मल चित्त और निर्विकारी ।
अल्पभाषी निद्राजीत
योगी होगा सदा पुनीत ।

एकान्त प्रिय और अर्न्तमुखी
बाहयजगत से सदा विमुखी ।
अमृतवेले रूह रुहान
योगी करे नित ज्ञान स्नान ।।

नष्टोमोहा स्मृति स्वरूप
कर्म संकल्प होगा अनुरूप ।
इच्छा मात्रम् सदा अविद्या
योगी संग नहीं आलस्य निदिया ।।

नशा खुमारी मस्त मौलाई
रूहानी आकर्षण खुशी अल्लाही ।
त्याग वैराग्य साफ वो दर्पण
योगी मन बुद्धि हृदय से अर्पण ।।

आदि अनादि सस्कारों की पुंज
दिव्य गुणों की होगी कुंज ।
परमात्मा निश्चयी आत्म विश्वासी
योगी होगा बेहद का सन्यासी ।।

शुभ चिंतक सदा स्नेही
पावन दृष्टि सदा विदेही
मन वाणी से सदा निरोगी
योगी होगा नहीं वियोगी ।।

दीपमाला अथवा दीपावली

आज जिस त्योहार को अपभ्रंश शब्दावली में 'दिवाली' कहा जाता है, उसका प्रारम्भिक और शुद्ध नाम है—दीपावली अथवा दीपमाला । कुछ भी हो, इस त्योहार के नाम में 'दीप' 'दीया' या 'दीवा' शब्द का समविश तो है ही । यद्यपि आज बहुत कम लोग इस शुभ अवसर पर "दीपों की माला" जगाते हैं (अधिकतर लोग मोमबत्ती या बिजली से प्रकाश करते हैं) तथापि अभी तक इसका नाम दिवाली ज्यों का त्यों बना ही हुआ है । प्रश्न उठता है कि दीपक को इस त्योहार में विशेष महत्व क्यों दिया गया ?

क्या दीपक की रोशनी में लक्ष्मी जी का वाहन आ सकता है ?

इस प्रश्न के उत्तर में विचारकों ने अनेकानेक व्याख्यायें दी हैं । प्राय: यही कहा जाता है कि इस दिन घर में रोशनी करने से लक्ष्मी जी का शुभागमन होता है । परन्तु सोचने की बात है कि भारत में तथा विदेशों में जो करोड़ों हिन्दू लोग आज के दिन दीपक जलाते हैं, यदि उन सभी के यहाँ, दीपकों के जगाने के कारण ही लक्ष्मी जी जाने लगें, तब एक रात में सभी के यहाँ जाना किसी भी तरह सम्भव नहीं हो सकता । यदि लक्ष्मी जी सूक्ष्म काया धारण किये हुए, विद्युत-गति से भी जायें तो भी रात्रि के छ: सात घण्टों में उनका सभी के यहाँ पधारना तो एकदम असम्भव ही है ।

पुनश्च, इस मान्यता में भला क्या तुक है कि दीपक जगाने मात्र से इस दिन लक्ष्मी आ जायेंगी ? मन्दिर में या घरों मों वर्षों तक भक्तगण लक्ष्मी की मूर्ति अथवा चित्र के आगे धूप-दीप जगाते हैं, नवरात्रों में भी वे रात्रि-भर जाग कर उसकी बहुत ही भावपूर्ण पूजा, उसका आह्वान तथा उसके दर्शनों के लिए अनुनय-विनय करते हैं, तब भी किसी बिरले को ही देवी जी के दर्शन अथवा किसी भाग्यशाली के यहाँ उनका शुभागमन होता होगा, तो आज के दिन कैसे हरेक ऐरा-गैरा नत्थू-खैरा के घर में लक्ष्मी जी आयेंगी ? यदि इस प्रकार सबके घरों में अथवा दस-बीस लाख लोगों के घरों में लक्ष्मी जी आतीं तो आज भारत समृद्धशाली होता, आज यहाँ "गरीबी हटाओ" का नारा न लगाया जाता, और मनुष्य को वर्ष-भर धन कमाने के लिए उद्यम न करना पड़ता । स्पष्ट है कि वह दीपक कोई और है जो लक्ष्मी जी को आकर्षित करते हैं । ये मिट्टी के दीपक तो पतंगों को ही अपनी ओर खींचते हैं ।

फिर, लक्ष्मी जी का वाहन तो उल्लू दिखाया गया है जेकि रोशनी में उड़ान नहीं भरता, उसे तो अन्धेरे में ही दीखता है । अत: निश्चय ही इस त्योहार के पीछे कुछ और रहस्य है ।

दीपक कौन से जगे ?

वास्तव में भारत के सभी त्योहारों के पीछे गहन आध्यात्मिक रहस्य छिपे हैं । इसमें ही तो इसकी महत्ता है । भारत के मनीषियों ने जीवन का लक्ष्य या तो मुक्ति की प्राप्ति या स्वर्गिक सुख की प्राप्ति माना है । अत: यहाँ के सभी रस्म-रिवाज, सभी त्योहार और जन्म से लेकर मृत्यु तक के सभी कर्म-काण्ड इसी लक्ष्य को सामने रखकर होते हैं । अत: दीपक शब्द की भी अवश्य ही ऐसी ही भूमिका होगी ।

यों 'दीपक' शब्द के विभिन्न प्रयोग हैं । भारत की परम्परा में 'बच्चे' को **'कुलदीपक'** कहा जाता है, क्योंकि ऐसा माना जाता है कि वह कुल का नाम रोशन करेगा अथवा उसके जिन्दा रहने से कुल का नाम भी बुझेगा नहीं, मिटेगा नहीं । मन में किसी व्यक्ति या वार्ता को देखकर आशाये जागृत हों तो कहा जाता है कि —"मेरे मन में **'आशाओं के दीप'** जल उठे ।" । किसी का भाग्य चमक उठे तो कहते हैं कि इसके **भाग्य का दीप** जगमगा उठा है । महफिल लगी हो तो उसमें जल रही शमा को रौनक तथा खुशी का चिन्ह माना जाता है । इसलिए "खुशियों के जल उठे दीप . . ." अर्थ में भी 'दीप' शब्द का प्रयोग होता है । **विशेष बात यह है कि आत्मा को भी दीपक की लौ से उपमा दी जाती है । किसी विशिष्ट व्यक्ति का यदि देहान्त होता है तो लोग कहते हैं कि उसका जीवन-दीप बुझ गया, चिराग गुल हो गया । फिर, प्रभु से योग लगाना अथवा मन को एकटिक उसकी स्मृति में स्थित कर देने का जो अभ्यास है, उसे भी दीपक की लौ से उपमा दी जाती है । इसी अर्थ को लेकर ही मन्दिरों में दिन के समय रोशनी होने पर भी दीपक जलाये जाते हैं । किसी मनुष्य को ज्ञान प्राप्त होता है तो उसके बारे में भी मुहावरे में कहा जाता है कि 'इसका दीपक तो जग गया है ।'**

इन सभी वाक्यांशों से स्पष्ट है कि दीपक शब्द भाग्य, खुशी, शुभ, आशा, रोशनी और जीवन के अर्थ में भी प्रयोग होता है—इसका अक्षरार्थ लेना ही उचित नहीं । विशेष तौर पर अज्ञानता को दूर करने के अर्थ ही धार्मिक कार्य-कलापों में, मन्दिरों में, पूजा-पद्धति में दीपक जगाये जाते हैं, भूले-भटके को राह दिखाने के अर्थ में दीपक का सामाजिक प्रयोग होता है ।

तो निश्चय ही मन-मन्दिर में ज्ञान-दीप जगाने से ही लक्ष्मी जी

का आगमन हो सकता है । इसीलिए उक्ति में भी कहा गया है कि "ज्ञान द्वारा ही नर-नारायण बनता है और नारी लक्ष्मी ।" देवत्व की प्राप्ति ज्ञान-प्रकाश से ही होती है, अत: देवी लक्ष्मी जी भी तो ज्ञान-दीप जगाने से ही आयेंगी । जब ज्ञान-दीप जगते हैं अर्थात् मानव-जीवन में अज्ञानता का कालुष्य मिटता है, तभी उसका भाग्य दीप जगता है, तभी वैकुण्ठ-सुख के लिए उसके आशादीप भी सही अर्थ में जलते हैं और खुशियों के दीप भी ।

'दीपक' याद का भी सूचक है । मुसलमान लोग किसी प्रिय की कब्र पर जाकर किसी विशेष दिन दीपक जगाते हैं । किसी विशेष दिन किसी महान् व्यक्ति की याद में कोई उत्सव मनाया जाता है तो भी दीपक जगाये जाते हैं । हम बता आये हैं कि **ईश्वरीय याद अथवा योग को भी दीपक की लौ से उपमा दी गई है । अत: निश्चय ही दीपावली अथवा दीपमाला परमपिता परमात्मा की स्मृति रूपी दीपकों को जगाने का त्योहार है; यह आत्मा को भटकने से बचाने तथा वैकुण्ठ एवं मुक्ति की राह दिखाने के लिये ज्ञान-दीप जगाने का द्योतक है ।**

दीपावली अमावस्या के अवसर पर

भक्त लोग लक्ष्मी का वाहन उल्लू को मानते हैं । वाहन गति का सूचक है । गति देश और काल की अपेक्षा से होती है अर्थात् जब कोई भी चलता है तो हम यह जरूर जानने की कोशिश करते हैं कि वह किस ओर (किस दिशा में) गया और कब (किस काल में) गया । तो अमावस्या के अवसर पर, उल्लू-वाहनी लक्ष्मी का उत्सव मनाना इस बात का परिचायक है कि जब सब दिशाओं में, सारे विश्व में अन्धकार होता है तथा विश्व के इतिहास में जो सबसे अन्धकारमय समय होता है, तभी लक्ष्मी जी का आह्वान होता है । उचित आह्वान करने पर, अर्थात् उजाला करने पर, वह आती हैं । चूँकि कलियुग ही सभी युगों की अपेक्षा अत्यन्त अन्धकारपूर्ण (अज्ञानतापूर्ण) काल होता है और उसके अन्त में प्रकाश होने पर ही सतयुग आता है, तभी श्री लक्ष्मी जी का साक्षात् स्वराज्य होता है । इससे सिद्ध है कि कलियुग के अन्त और सतयुग के आरम्भ के शुभ संगम समय ही मनुष्यात्माओं के ज्ञान-दीप जगते हैं । कलियुग 'गर्मी' का तथा सतयुग 'शीतलता' का युग है, अत: दोनों ऋतुओं के संगम पर जो अमावस्या आती है तभी दीपावली महोत्सव पड़ता है । वही युग-परिवर्त्तन, विश्व-परिवर्त्तन हृदय-परिवर्त्तन अथवा जीवन-परिवर्त्तन का महत्वपूर्ण समय है, तभी लोग प्रभु-स्मृति के दीपक जगाते हैं और अन्धकार मिटाते हैं ।

दीप 'माला' क्यों ?

कहावत भी है कि एक दीपक से दीवाली नहीं होती । जब तक समस्त जन-मन आलोकित न हो तब तक संसार में कलह-क्लेश बना ही रहेगा । अत: परमपिता परमात्मा शिव, जो सदा जागती ज्योति है, कलियुग के अन्त में अवतरित होकर सतयुग रूपी प्रकाश-युग लाने के लिए जन-धन को ज्ञान-प्रकाश देते हैं । उस एक सदा जगते दीपक (शिव) से दूसरों के आत्म-दीप जगते हैं और उसी की पुण्य स्मृति में दीपमाला का त्योहार हर वर्ष मनाया जाता है । इस बात को ध्यान में रखते हुए यदि हम आत्म-दीप को ज्ञान-ज्योति से जगायें तो निश्चय ही हम बैकुण्ठ में भी लक्ष्मी एवं नारायण के राज्य में सुख का स्वराज्य प्राप्त कर लेंगे ।

"भ्राता जगदीश चन्द्र जी द्वारा विदेश में ईश्वरीय सेवाओं की धूम"

आस्ट्रेलिया समाचार मिला है कि ब्रहमाकुमारी ईश्वरीय विश्व विश्व विद्यालय के मुख्य प्रवक्ता एवं महान लेखक ब्रहमाकुमार जगदीश चन्द्र जी जब दिल्ली से सिंगापुर पहुँचे तो वहां पर राज्योगी भाई बहिनो की क्लासेज तथा कुछ प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मिलना हुआ । सिंगापुर से आप पर्थ के लिए रवाना हुए । पर्थ में तीन रेडियो इन्टरव्यु हुए । एक इन्टरव्यु आधे घण्टे का था जिसमें टेलीफोन पर उसी समय प्रश्न भी पूछे गये । दो इन्टरव्यु 15–15 मिनट के थे । जगदीश भाई ने "पुनर्जन्म" पर बहुत ही स्पष्ट रूप से अपना वक्तव्य दिया । सार्वजनिक कार्यक्रम में 350 प्रतिष्ठित लोग उपस्थित थे । प्रवचन सुनने के पश्चात् सभी ने योग अभ्यास भी किया । पर्थ में एक नये सेवाकेन्द्र का उदघाटन समारोह भी हुआ राजयोगी विद्यार्थियों की क्लासेज भी आपने कराई । वहां से एडलेड गये । दो रेडियो इन्टरव्यु तथा अखबारों वालों के साथ भेंट वार्ता हुई । सार्वजनिक कार्यक्रम भी बहुत ही सफल रहा । मैलबोर्न में वहां की मोनाश युनिवर्सिटी में प्रवचन चला तथा प्रोफेसर्स के साथ व्यक्तिगत ज्ञान की वार्तालाप हुई । मैलबोर्न में भी 3 रेडियो इन्टरव्यु हुए । सार्वजनिक कार्यक्रम में लगभग 500 आत्माओं ने लाभ लिया । मैलबोर्न से 70 किलोमीटर दूर जीलांग में भी आपका जाना हुआ । वहां पर प्रेस इन्टरव्यु तथा सार्वजनिक कार्यक्रम चला ।

बासवान बागेवाडी में सेवाकेन्द्र के नये मकान का उद्घाटन दादी चन्द्रमणि जी द्वारा सम्पन्न हुआ ।

राजगढ़ (म.प्र.) में योग शिविर का उद्घाटन करते हुए कलैक्टर साहब । साथ में ब्र.कु. पुष्पा बहन खड़ी हैं ।

जमशेदपुर में केबल कम्पनी के चीफ सिक्यूरटी आफीसर भ्राता डी. प्रकाश को कार्यक्रम पश्चात् ईश्वरीय सौगात देते हुए ब्र.कु. शिव कुमारी जी ।

कृष्णा नगर-देहली सेवा केन्द्र की ओर से प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र - झील कुरंजा में आध्यात्मिक कार्यक्रम में केन्द्र में शिक्षक अधिकारी ब्र.कु. कमलमणि, चन्द्रकला, सावित्री तथा ब्र.कु. जगरूप जी के साथ खडे हैं ।

झुन्झुनू (राज.) में प्रदर्शनी का उद्घाटन करने के पश्चात्, जिलाधीश भ्राता राधेकान्त शर्मा को ब्र.कु. पुष्पा ईश्वरीय सौगात दे रही हैं ।

फतेहपुर केन्द्र द्वारा आध्यात्मिक शिक्षा प्रसार का उद्घाटन करने के पश्चात् जिलाधिकारी भ्राता चन्द्रकांत शर्मा को ब्र.कु. सरिता लक्ष्मी नारायण का चित्र भेंट करते हुए । पास में खड़ी हैं ब्र.क. दलारी जी ।

गुलबर्गा में आयोजित आध्यात्मिक कार्यक्रम में भ्राता जगन्नाथन डी.आई.जी. गुलबर्गा भाषण करते हुए । मंच पर (बाएं से) ब्र.कु. प्रेम, ब्र.कु. विजया, महापौर भ्राता सिद्दराम आयरेड्डी, दादी चन्द्रमणि जी विराजमान है ।

लखनऊ के आध्यात्मिक कार्यक्रम के बहन स्वरूप कुमारी बख्शी, महामंत्री उत्तर प्रदेश कांग्रेस कमेटी उपस्थित है । साथ में ब्र.कु. किरनी है ।

गोकाक सेवाकेन्द्र द्वारा हाईस्कूल में आयोजित आध्यात्मिक कार्यक्रम में स्कूल के विद्यार्थी बड़े ध्यानपूर्वक प्रवचन सुनते हुए ।

मालेगांव सेवा केन्द्र द्वारा पीप्पलनेर में आयोजित आध्यात्मिक प्रदर्शनी का उद्घाटन करते हुए शूगर मिल के अध्यक्ष भ्राता साहेबराव पाटील जी ।

चित्र में अलीगढ़ सेवा केन्द्र पर भ्राता मार्तन्ड सिंह (पी.सी.एस.) भ्राता शशि शेखर सिंह (पी.सी.एस.) दोनों मध्य में, बाएं भ्राता ओम प्रकाश पौनियाँ तथा दाई ओर श्रीमति शेखर सिंह तथा ब्र.कु. सुदेश ।

अलीगढ़ सेवा केन्द्र पर भ्राता पी.एल. पुनियाँ जिलाधीश पधारे, वे ब्र.कु. सुदेश, ब्र.कु. ओमप्रकाश पौनिया तथा अन्य के साथ ।

औद्योगिक शांति तथा प्रन्यासी भाव

माउण्ट आबू में आयोजित विश्व शांति सम्मेलन - १९८४ में अंगीकृत

यंत्र युग या कलयुग के विशिष्ट लाभ हैं और उसकी गंभीर समस्यायें भी हैं । हम यह देखते हैं कि इस युग में बड़े पैमाने पर यंत्रीकृत औद्योगीकरण होने के कारण उपभोक्ता-वस्तुओं का उत्पादन भारी मात्राओं में हुआ है, तथापि उसके परिणामस्वरूप 'वर्ग युद्ध' भी उत्पन्न हो गया है । उससे श्रमिक वर्ग और पूंजीपति वर्ग के बीच युद्ध सा छिड़ गया है, जो कि एक ही देश के लोगों के बीच का युद्ध है । उसने औद्योगिक अशांति को जन्म दिया है और आर्थिक संरचना प्रभावित हुई है । गहरे विश्लेषण पर हम यह देखते हैं कि श्रमिक संघों तथा मिल मालिकों के बीच जो संघर्ष होता है उससे न केवल ये दो पक्ष ही प्रभावित होते हैं, बल्कि उपभोक्ताओं, अंशधारियों और उनके परिवारों को और अंततः समाज के सभी वर्गों को उससे आर्थिक परिणाम भुगतने पड़ते हैं क्योंकि हड़ताल करने, धीमे काम करने तथा काम बंदी आदि से जो भारी हानियां होती हैं उनसे समाज के संपूर्ण आर्थिक ढांचे को भीषण आघात पहुंचता है । हर वर्ष लाखों कार्य घण्टे नष्ट हो जाते हैं, उत्पादन के लक्ष्यों की गंभीर हानि होती है और कम उत्पादन के कारण मूल्य बढ़ जाते हैं और इसके परिणाम स्वरूप अगली क्रियाओं तथा प्रतिक्रियाओं का सिलसिला चल पड़ता है । विकासशील देशों के मामलों में यह बात विशेष रूप से लागू होती है, जहां उद्योग अधिकतर श्रम प्रधान होता है और इसलिए समग्र उत्पादकता मुख्यतः श्रमिकों द्वारा किए गए उत्पादन पर निर्भर होती है । यदि इन देशों के श्रमिक हड़ताल करते हैं तो उत्पादन की भारी हानि होती है और परिणाम स्वरूप अत्यधिक स्फीति की स्थिति पैदा हो जाती है और बेरोजगारी बढ़ जाती है तथा इन बातों के फलस्वरूप श्रमिको को हानि होती है, उद्योग की हानि होती है और देश की भी हानि होती है ।

कटुता तथा तनाव

इतना होने पर भी हानि केवल आर्थिक मोर्चे पर ही नहीं होती बल्कि संबंधों में कटुता आ जाने के कारण श्रमिकों के निर्धन परिवारों की शांति भंग हो जाती है, जिन्हें हड़ताल की लम्बी अवधि के दौरान अपने जीवन निर्वाह के लिए ऋण लेने पड़ते हैं और बाद में भारी ब्याज सहित ऋणों का भुगतान करना पड़ता है तथा इस बात की भी संभावना रहती है कि उन्हें बर्खास्त कर दिया जाए या तालाबंदी हो जाय । इस प्रकार की परिस्थिति के कारण पूंजीपतियों को भी रात को नींद नहीं आती क्योंकि उन्हें असुरक्षा का भय रहता है और उन्हें स्वयं को और अंशधारियों को हानि से बचाना भी होता है । उससे न केवल शासन के लिए विधि और व्यवस्था की समस्या उत्पन्न हो जाती है, बल्कि उससे संपूर्ण वातावरण में तनाव भी पैदा हो जाता है क्योंकि श्रमिक संघ बड़ी-बड़ी सभाएं करते हैं, गगनभेदी नारे लगाते हैं, जोशीले भाषण देते हैं, जनता की सहानुभूति पाने के लिए जुलूस निकालते हैं, दूसरे श्रमिक संघों से कहते हैं कि वे भी उनकी सहानुभूति में प्रतीकात्मक हड़तालें करें और मिलमालिक तथा कारखाने के कर्मचारियों तथा कामगरों को धमकाते हैं कि यदि वे काम पर जायेंगे तो नतीजा बुरा होगा । एक अन्य बात, जिस पर संभवतः ध्यान नहीं दिया गया है वह यह है कि हड़तालों के दौरान कुछ श्रमिक कुछ बुरी लतों के फेर में आ जाते हैं जो कि स्वयं उनके लिए भी हानिकर हो जाती हैं और समाज के लिए भी ।

दूसरी ओर मिलमालिक भी, जिनमें अपने भी विनिमूहासंघ होते हैं, अधिकाधिक शक्ति से चुनौती का सामना करने की तैयारी करते हैं । वे श्रमिक संघ के लोगों के बीच फूट डालने की कोशिश करते हैं या विभिन्न श्रमिक समूहों के बीच विरोध और संघर्ष पैदा कर देते हैं । वे श्रमिक संघ को तालाबंदी की धमकी देते हैं । वे श्रमिकों की बचत करने के उपाय ढूंढते हैं या अत्याधुनिक स्वचालित यंत्र स्थापित करने की बात सोचते हैं ताकि श्रमिकों पर कम से कम निर्भर रहना पड़े और उनकी संख्या में भारी कमी की जा सके । घृणा, ईर्ष्या, द्वेष, चुनौतियों और जवाबी चुनौतियों तथा वर्ग संघर्षों से सर्वप्रथम शांति विनिष्ट होती है । जब उत्पादन का पहिया थम जाता है तो मिल मालिकों और श्रमिकों या उद्योगपतियों को आराम तो नहीं मिलता, बल्कि अशांति के इस वातावरण और उनके मन के बीच संघर्ष छिड़ जाता है । इस वातावरण में हर व्यक्ति यह भूल जाता है कि औद्योगिक शांति औद्योगिक उन्नति की पहली शर्त है और औद्योगिक शांति स्फीति के निराकरणों के लिए तथा गरीबी और बेरोजगार को जड़ से उखाड़ने या कम करने के लिए आवश्यक है और अंततः हड़तालें राष्ट्र के स्वास्थ्य, धन और सुख के लिए विशेषतः उन लोगों के लिए जो कि उससे पूर्णतः प्रभावित होते हैं, हानिकर हैं ।

क्या अध्यात्मवाद से कोई हल मिलता है ?

इसलिए यह गंभीर समस्या कोई प्रभावशाली हल की मांग करती है, क्योंकि वह बहुत से लोगों की शक्ति को निचोड़ लेती है और उनके अन्य लोगों का ध्यान उपयोगी और सार्थक कार्यों से विकर्षित कर देती

है और सर्वोपरि उसमें तनाव तथा अशांति की उत्पत्ति होती है, जिसके दुष्परिणामों में से एक तो यह है कि लोगों का स्वास्थ्य खराब हो जाता है और दूसरा दुष्परिणाम यह है कि लोग विनाशकारी क्रियाकलापों में संलग्न हो जाते हैं । इसका समाधान मानसिक, अभिवृत्यात्मक तथा अध्यात्मिक प्रेम में पाना होगा, ताकि संबंधों में सामंजस्य की तथा मन की शांति की पुन: स्थापना हो सके ।

इस संदर्भ में यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि समाजवाद और मार्क्सवाद ने इन समस्या को सुलझाने की कोशिश की है किन्तु वे असफल रहे हैं और यह तथ्य पौलैण्ड तथा चेकोस्लोवाकिया में उदाहरणों से स्पष्ट हो जाता है । साम्यवाद ने विवाद के दो पक्षों में से एक पक्ष को पाशविक बल के जरिए समाप्त करके उसे हल करने की कोशिश की । इस प्रक्रिया में उसने राजकीय पूंजीवाद के रूप में अधिक शक्तिशाली शत्रु को सिंहासनासीन कर दिया, जिसने श्रमिकों की आजादी छीन ली है और स्वयं को सुदृढ़ बनाने के लिए श्रमिक संघों का निर्माण किया है । आय की अत्यधिक असमानता जिसे समाप्त करना साम्यवाद का मुख्य प्रयोजन था, रूस में आज भी विद्यमान है और निजी उद्योगों पर धीरे-धीरे चीन की भी पकड़ ढीली पड़ती जा रही है । साम्यवादी गण जिनका घोषणा-पत्र यह कहता है कि राज्य सत्ता समाप्त हो जाएगी, अब यह आशा नहीं देते । स्तालिन ने स्वयं कहा कि जब तक विश्व क्रान्ति न हो तब तक राज्य सत्ता किसी एक समाजवादी देश में समाप्त नहीं हो सकती क्योंकि पूंजीवाद ने घेराबन्दी की हुई है । अत: न केवल असमानता समाप्त नहीं हुई है, बल्कि औद्योगिक श्रमिकों ने व्यक्तिगत स्वतंत्रता खो दी है । अब प्रश्न यह है कि क्या आध्यात्मवाद में कोई हल है ? किन्तु इससे पहले कि इस समाधान पर चर्चा करें आइए मानवीय संबंधों के क्षेत्र में उत्पन्न हुई कटुता के मुख्य कारणों को समझें । हम यह देखेंगे कि औद्योगिक शांति को नष्ट करने वाले मुख्य कारण निम्नानुसार हैं :—

औद्योगिक अशांति के कारण तथा उत्पति

१. आय में गंभीर असमानता

मुख्य बात यह है कि जब श्रमिक वर्ग के लोग अपनी आय और अपने नियोजकों की आय, परिलब्धियों और जीवन स्तर के बीच गंभीर असमानता देखते हैं तो उनके मन में बड़ी कुण्ठा जागती है ।

बात केवल इतनी ही नहीं है कि असमानता विद्यमान है बल्कि उद्योगपति अपने धन को बढ़ाने के लिए, अधिक अंशधारियों को आकृष्ट करने के लिये और उत्पादन के नए उपकरण स्थापित करने के लिए यह विद्यमान औद्योगिक इकाई का विस्तार करने के लिए अधिकाधिक लाभ चाहते हैं, इन सभी बातों के पीछे उनका मुख्य उद्देश्य यह है कि उनकी अपनी परिसंपतियां बढ़ें । श्रमिक यह देखता है कि कठोर परिश्रम के बावजूद यह अपने जीवन की न्यूनतम आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाता और कारखाने का मालिक बिना कठोर परिश्रम किए ऐशो आराम की जिंदगी गुजारता है और अपार संपति का संचय कर लेता है । इसलिए उसका मन कटुता से भर जाता है और वह निराश हो जाता है । वह अधिक मजदूरी की, अधिक बोनस की तथा कार्य के घण्टे कम करने की मांग उठाता है । कारखाने का मालिक उनकी मांग मानना नहीं चाहता और प्रतिशोध करता है ।

२. वर्ग संघर्ष का प्रत्यय और मात्र अधिकारों का आग्रह

वर्तमान परिस्थिति में दोनों पक्षों में से कोई भी पक्ष अपने कर्तव्यों की परवाह नहीं करता । शीघ्र ही मात्र अधिकारों का वह आग्रह, वर्ग-संघर्ष का रूप धारण कर लेता है जिससे नारेबाजी, घृणा-अभियान, असद्भाव तथा अन्य बुराइयों से पारस्परिक संबंध बिगड़ जाते हैं और आपसी समझ तथा बातचीत के दरवाज़े बंद हो जाते हैं । इस संघर्ष में हर पक्ष अपने अधिकारों की बात करता है और कोई भी पक्ष दूसरे पक्ष के प्रति और समाज के प्रति, उसका क्या कर्तव्य है इसकी परवाह नहीं करता और न उनमें से किसी भी पक्ष के मनमें सेवा की अभिप्रेरणा होती है और न किसी पक्ष के सामने कोई लक्ष्य ही होता है । बल्कि वे मात्र भौतिकवादी प्रतिफलों की जकड़ में होते हैं, स्वार्थपरता की शक्तियां अपने खेल दिखाती हैं और वे एक दूसरे को अपना विरोधी मान लेते हैं ।

वर्ग-संघर्ष का प्रत्य, जिसे कार्ल मार्क्स ने प्रतिपादित किया था और अब जिसे सभी श्रमिक संघों ने फैला दिया है, हितों की अपसारिता तथा आर्थिक जीवन की विषमता को टुकड़े-टुकड़े कर देता है । यह विचार कि दो वर्गों के बीच हितों का संघर्ष स्वाभाविक है, उन्हें यह सोचने के लिए प्रेरित करता है कि औद्योगिक संबंधों में तनाव तथा संघर्ष का होना केवल सामान्य घटना है और अपरिहार्य है । श्रमिक यह सोचते हैं कि आंदोलन के बिना मजदूरी नहीं बढ़ेगी और अधिक बोनस नहीं मिलेगा और मिल मालिक यह सोचते हैं कि श्रमिक अपनी मजदूरी बढ़वाने के लिए आंदोलन तो करेंगे ही फिर तब तक बातचीत के लिए इन्तजार क्यों न कर लिया जाए क्योंकि यदि उद्योगपति स्वयं ही मजदूरी बढ़ा देते हैं तो उसे गलत समझा जावेगा और पहले पहल तो श्रमिक उसे स्वीकार नहीं करेंगे, क्योंकि उनके संघ यह समझेंगे कि उन्हें नजरअंदाज कर दिया गया है और वे अपनी प्रतिष्ठा को बचाने के लिए आन्दोलन करेंगे ताकि मिल मालिक या उद्योगपति कुछ और रियायतें देना स्वीकार कर लें ।

३. आंदोलनात्मक साधनों को अपनाना

इसके अतिरिक्त, इस व्यवस्था में जहां मन उद्विग्न हो तथा संबंधों में अत्यधिक कटुता आ गई हो, प्रत्येक पक्ष अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई भी साधन अपना सकता है और वह यह कतई नहीं सोचेगा कि क्या साधन नैतिक दृष्टि से उचित तथा आध्यात्मिक

और सामाजिक दृष्टि से उदात है या नहीं । एक पक्ष द्वारा अपनाए गए उकसाने वाले या विनाशक उपायों और दूसरे पक्ष द्वारा अपनाये जाने वाले प्रतिकारात्मक उपायों के कारण हिंसा भड़कती है और बातचीत तथा समझौता करना कठिन हो जाता है । प्रत्येक पक्ष द्वारा अपनाये जाने वाले पैंतरों से ज्वाला सी फैल जाती है और यदि श्रमिकों का नेता महत्वाकांक्षी, स्वार्थी तथा दुराग्रही हो तो हड़ताल लंबी खिंच जाती है तथा दोनों पक्षों को अत्यधिक हानि होती है और यदि दूसरी ओर कारखाने का मालिक धन, सत्ता और शासन के उच्च अधिकारियों पर अपने प्रभाव के नशे में चूर हो या गर्ममिजाज हो तथा समझौता न करने वाला हो तो भी यह युद्ध लम्बे समय तक चल सकता है और मिल को भावी हानि हो सकती है या मिल बंद भी हो सकती है ।

४. संघों के बीच पारस्परिक प्रतिस्पर्धा तथा बढ़ी-चढ़ी मांगे

कभी कभी, श्रमिक अशांति इस कारण होती है क्योंकि एक उद्योग में अनेक श्रमिक संघ होते हैं और संघों के बीच पारस्परिक प्रतिस्पर्धा तथा राजनीति चलती रहती है । विभिन्न राजनैतिक दल तथा विभिन्न श्रमिक संघ और नेतागण, अपने प्रभाव क्षेत्र तथा प्राधिकार को बढ़ाने के इरादे से बढ़ी-चढ़ी मांगें रखकर कर्मचारियों और मालिकों में बीच की खाई को चौड़ा करने की कोशिश करते हैं । आकर्षक मांगों को देखकर श्रमिक आसानी से धोखा खा जाते हैं और उन श्रमिक संघ नेताओं के आवाहन पर हड़तालों का सहारा ले लेते हैं ।

५. बोझ से लदे मन और आंतरिक शक्ति की आवश्यकता

कभी-कभी प्रबंधकीय कर्मचारियों तथा श्रमिकों में बीच में के संबंधों में कटुता का होना अशांति का कारण बन जाती है । प्रबंधको पर अनेक समस्याओं का बोझ होता है और श्रमिकों से किसी भी प्रकार की असहमति होने से उनके मन में अशांति तथा विलोम जनक विचार हलचल मचा देते हैं । श्रमिकों के मन पर भी बोझिल समस्याओं का भ्रम होता है और चूंकि दोनों पक्षों को एक-दूसरे के प्रति असामंजस्यपूर्ण प्रवृत्ति होने के कारण, उनमें से प्रत्येक पक्ष किसी भी टीका टिप्पणी को उत्तेजक मान लेता है या दूसरे पक्ष में व्यवहार को आपत्ति जनक मान बैठता है और प्रतिकार में उपाय के रूप में हड़ताल हो जाती है ।

हल

अब यदि यह विश्लेषण सही है तो स्पष्टत: हल यही है कि दोनों पक्षों के सामने एक जैसा लक्ष्य हो और एक उच्चतर आदर्श हो, ताकि दोनों पक्षों को उनके प्रयास से समुचित लाभ हो बल्कि वे शत्रुता और वर्ग संघर्ष की भावना से ऊपर उठें और शांति तथा सहयोग पूर्ण जीवन व्यतीत करें । उन्हें यह बात भी हृदयगम करनी चाहिए कि पूंजी के बिना श्रम व्यर्थ है और श्रम के बिना पूंजी निष्प्रभावी और अनुत्पादक है और इसलिये वर्ग संघर्ष की कोई गुंजाइश ही नहीं है, बल्कि सहयोग की आवश्यकता है । मुश्किल तब पैदा होती है जब मिल मालिक अपने उचित हिस्से से अधिक धन पाना चाहते हैं या जब श्रमिक इतनी मजदूरी की मांग करते हैं जितनी उचित न हो या जितनी कारखाने का मालिक दे नहीं सकता । वस्तुत:, दोनों पक्षों को इस बात का अहसास होना चाहिए कि वे एक मनुष्य के दो हाथ या दो पैर हैं और इसलिए शत्रुता का कोई कारण ही नहीं है और इसलिए उन्हें सहयोग की भावना से कार्य करना चाहिए । श्रमिकों को यह समझ लेना चाहिये कि अंतत: ऊँची मजदूरियों, उन्नत कार्य स्थितियों बोनस तथा अन्य लाभों की प्राप्ति तभी होगी जब उत्पादन बढ़ेगा और अच्छी किस्म के माल का उत्पादन होगा । उद्योगपतियों को यह समझना चाहिए कि उनका सर्वप्रथम कर्तव्य यह देखना है कि उनके कर्मचारी या श्रमिक संतुष्ट हैं ताकि वे उद्योग की उत्तम सेवा कर सकें ।

इसके अतिरिक्त, दोनों पक्षों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि धन ही सब कुछ नहीं है, बल्कि यह जीवन की आवश्यकताओं में से एक है । मुख्य बात यह है कि जीवन में पूर्ण संतोष मिले और इसके लिए हमें दूसरे लोगों के संतोष का भी ध्यान रखना चाहिए । इसलिए एक-दूसरे की आवश्यकताओं को समझना इस विषय में बहुत महत्वपूर्ण है । यदि उद्योगपति प्रत्येक श्रमिक का ध्यान रखें तो प्रत्येक श्रमिक उद्योग की उन्नति का ध्यान रखेगा । यदि उद्योगपति अपने श्रमिकों के प्रति सद्भाव रखें और श्रमिक लोग उद्योगपतियों के प्रति सद्भाव रखें तो प्रत्येक को स्थायी शांति मिलेगी । इसके लिए अच्छा व्यवहार सम्यक सम्मान और उचित कार्यवाही आवश्यक है और यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि प्रत्येक मनुष्य बहुत महत्वपूर्ण है और यह कि एक अशांत व्यक्ति कई अन्य लोगों की शांति को नष्ट कर सकता है ।

उन्हें यह बात भी समझाई जानी चाहिए कि अधिकारों के अतिरिक्त प्रत्येक पक्ष में कुछ कर्त्तव्य भी हैं जिनकी उन्हें उपेक्षा नहीं करनी चाहिए और उन्हें केवल अपने आर्थिक कल्याण का ही ध्यान नहीं रखना चाहिए बल्कि अपनी नैतिक उन्नति का भी ध्यान रखना चाहिए और इसलिए उन्हें ऐसे साधन अपनाने चाहिएं, जो कि पारस्परिक सद्भाव, आपसी समझ और समझौते की भावना पर आधारित हों ।

सामंजस्यपूर्ण संबंधों का आधार

वर्ग-संघर्ष की भावना को समाप्त करने तथा सम्बन्धों में सामंजस्य लाने हेतु कुछ सुझाव :

१. मज़दूर तथा मालिक परमात्मा को माता-पिता मानते हुए स्वयं को भाई २ समझना चाहिये या अपने देश को माता मानकर स्वयं को उस एक के पुत्र मानते हुए 'आपस में हम भाई २ हैं' ऐसा मानना चाहिये ।

२. मजदूरों को वेतन देने तथा मिल मालिकों की आय निकालने के बाद जो सम्पति शेष बचती है उसका मिल-मालिक स्वयं को न्यासी समझे । वे मज़दूरों का स्वयं को रक्षक समझे ।

३. दोनों पक्षों को यह निश्चय करना चाहिये कि उनके सम्बन्ध अहिंसा,सहयोग तथा सदभावना युक्त होंगे और वे धैर्य से काम लेंगे तथा घृणा,क्रोध और लोभ का परित्याग करेंगे ।

४. उद्योगपति या प्रबन्धक तथा कर्मचारी कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व आधा घंटा प्रति दिन राजयोग अभ्यास करें इससे आपसी भाई चारा बढ़ेगा, उनके मन से नकारत्मक विचार समाप्त होंगे और सद्भावना, सत्यता तथा कार्यक्षमता में वृद्धि होगी ।

५. दोनों पक्ष वचन बद्ध हों कि वे अपने झगड़े, आपसी बातचीत, सुलह सफाई से निपटाएंगे ।

अब प्रश्न है कि न्यासी भाव क्या है और मजदूरों के कम से कम मजदूरी तथा मिल मालिकों की ज्यादा से ज्यादा आमदनी कैसे निश्चित की जावें ?

न्यूनतम मज़दूरी तथा अधिकतम आमदनी

'न्यूनतम मज़दूरी ' तथा 'अधिकतम आमदनी ' के विषय पर राष्ट्रीय सामंजस्य होना आवश्यक है । मजदूरों तथा उद्योगपतियों से सरकार बातचीत कर के भिन्न २ स्थानों के लिये तथा विभिन्न श्रेणियों के लिये इन्हें निश्चित कर सकती है । फिर भी हम कह सकते हैं कि जहां ३०% से अधिक बचत होती है वहां के मजदूर की कम से कम मजदूरी इतनी हो कि उसे अनी पत्नी तथा दो बच्चों सहित ठीक खाने को मिले, दो कमरों का रहने के लिए मकान मिले, पहनने के लिये कपड़े मिलें, दवा दारू, आने जाने के साधन जुटें, उस के वेतन का ५% बच्चों की पढ़ाई के लिये हो और वार्षिक बोनस भी होना चाहिये । या इसके बजाए मजदूर को उतना वेतन मिलना चाहिये जितना के उस इलाके में एक राज्य कर्मचारी को मिलता है । यह मजदूर की न्यूनतम मजदूरी समझनी चाहिए ।

'अधिकतम आय ' जो कि मिल मालिक को मिलनी चाहिये उस में एक तो जो पैसा लगाया है उस पर ५% सूद लगाया जाए तथा अधिकतम वेतन जो कि एक सार्वजनिक अधिकारी को मिलता है उसे दिया जाए या मजदूर के वेतन का ३० गुना हो तथा यातायात का खर्च, मेहमान निवाजी पर खर्च तथा लगाए गए पैसे पर ५% सूद आदि शामिल हो । इस विषय में यह समझ लेना चाहिये कि उद्योगपतियों को अधिक वेतन देना होगा क्योंकि वे अपना पैसा लगाते हैं, खतरा मोल लेते तथा नया कार्य शुरु करने का साहस दिखाते हैं ।

इस विषय में यह समझ लेना चाहिये कि आय का इतना अन्तर तो स्वीकार्य है क्योंकि उद्योगपति में विशेष प्रबंध कुशलता तथा हानि होने का खतरा भी मूल लेता है । रूस में भी न्यूनतम तथा अधिकतम आय एक-बीस की अनुपात में है । लगभग रूस की १०% जनसंख्या राष्ट्रीय आय का ५०% हिस्सा ले लेती है ।

प्रन्यासी भाव का नियम

न्यासीत्व का सिद्धान्त इस संकल्पना पर आधारित है कि मानव जाति परमेश्वर के पितृत्व की छत्रछाया में एक विशाल परिवार है । परमेश्वर सत्यमय प्रेममय तथा पवित्रतम है । उसके बच्चों के रूप में हम सभी से यह प्रत्याशा की जाती है कि हम एक दूसरे के प्रति बंधु भाव पूर्ण व्यवहार करें, एक दूसरे को सहयोग दें और एक दूसरे के प्रति दयालु हों । हमें समस्त संपदा को परमेश्वर के सभी शिशुओं की संपदा मानना चाहिए । मिल मालिक या उद्योगपति को बड़े भाई के कर्तव्यों का निर्वाह करना है । उसे श्रमिकों की ऐसी देखभाल करनी है मानो कि वे उसके छोटे भाई हों और उसे उन श्रमिकों की चिकित्सा परिचर्या, शिक्षा और कल्याण के लिए, जिनके प्रयासों से उसे लाभ हुआ है, लाभों का उपयोग न्यास-धन की भांति करना है । जैसा कि किसी परिवार में प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी आवश्यकता के अनुसार धन लेता है, उसी प्रकार किसी उद्योगिक इकाई में प्रत्येक व्यक्ति अपनी प्रतिभा और आवश्यकता के अनुसार चाहा जाता है । किसी परिवार में सभी व्यक्ति समान मात्रा में भोजन नहीं करते और वृद्ध व्यक्ति की आवश्यकतायें युवक या शिशु की आवश्यकताओं से भिन्न होती हैं, उसी प्रकार श्रमिकों की आवश्यकतायें मिल मालिक की आवश्यकताओं से सदैव भिन्न होंगी, जिसमें कई कारण हैं । किन्तु प्रत्येक की आवश्यकताओं पर समान रूप से विचार किया जाना चाहिये और उसे उन्नति के समान अवसर मिलने चाहिए ।

श्रमिकों को मजदूरी का भुगतान करने और उद्योगपति को पारिश्रमिक का भुगतान करने के बाद जो धन बच जाता है न्याय सम्पति होगा, उस का प्रबंध न्याय द्वारा किया जाएगा, जिसमें मुख्यत: उद्योगपति, उसके परिवार के कुछ सदस्यों, श्रमिकों के एक प्रतिनिधि तथा शासन के एक प्रतिनिधि का समावेश होगा । उसका स्वामित्व शासन में निहित नहीं होगा बल्कि उद्योगपति में निहित होगा यद्यपि शासन के आय कर विभाग तथा संपदा कर विभाग उस पर निगरानी रखेंगे और उद्योगपति को न्यास संपत्ति का उपयोग केवल अपने ही व्यक्तिगत लाभों के लिए नहीं करने देंगे । इसके बजाय इसका उपयोग श्रमिकों या सामान्यत: देश के लोगों के कल्याण के लिए किया जाएगा, जिनमें निश्चय ही उद्योगपति शामिल है ।

संघों की भूमिका

यह कहा जा सकता है कि मानव प्रकृति के कतिपय मूल गुण या लक्षण होते हैं । समूह में रहना अर्थात समूहों का निर्माण करने और

संघ बनाने की प्रवृत्ति उनमें से एक है । दूसरी प्रवृत्तियां है ज़मा करने की और कब्जे में रखने की प्रवृत्ति तथा आत्म रक्षा के लिए लड़ने की और बाधाओं को दूर करने के लिए युद्ध करने की । न्यासीत्व के सिद्धान्त को क्रियान्वित करने से इन मूल प्रवृत्तियों पर कैसे काबू पाया जाएगा ? क्या श्रमिक समूहों में रहने की प्रवृति छोड़ देगें और संघ नहीं बनाएंगे । यदि वे संघ बनायेंगे तो क्या लड़ने की प्रवृत्ति उन पर हावी नहीं होगी और मिल मालिकों के साथ उनका संघर्ष नहीं होगा ? उनके सैन्य की भूमिका क्या होगी ?

उत्तर यह है कि न्यासीत्व का सिद्धान्त उनमें सहानुभूति और सहयोग की प्रवृत्ति जाग्रत करेगा । चूंकि मिल मालिक को उसमें पूंजी निवेश, कार्य, उद्यम, कौशल तथा जोखिम में अनुपात में आमदनी होगी और लाभों के शेष भाग का उपयोग स्वयं श्रमिकों के कल्याण के लिए किया जाएगा इसलिए फसाद का मुख्य कारण दूर हो जाएगा और विरोध का कारण निरस्त हो जाएगा, जो कि संघर्ष के लिए झुंड या समूह बनाने की प्रवृत्ति को उभारता है । पुन:श्च , चूंकि न्यास में श्रमिकों के अपने प्रतिनिधि होंगे इसलिए अपनी बात कहने की प्रवृत्ति का भी समाधान हो जाएगा और उन्हें ऐसा महसूस होगा कि न्यास धन दूसरों की तरह उनका अपना भी है । न्यास-संपत्ति का उपयोग उनके कल्याण के लिए भी किया जाएगा । इसलिए वे सचेतन रूप से कार्य करेंगे ताकि लाभ हो क्योंकि तब उन्हें बोनस भी मिलेगा और यह अंतत: उपभोक्ताओं और समाज के लिए भी हितकर होगा ।

संघों की भूमिका, जिनका निर्माण श्रमिकों द्वारा समूह में रहने की प्रवृत्ति के कारण किया जाता है, न्यासीत्व की योजना के अन्तर्गत भिन्न प्रकार की होगी । संघ, श्रमिकों के कल्याण तथा अन्य क्रियाकलापों के लिए योजनाएं बनायेंगे । उदाहरणार्थ वे कोई सहकारी भण्डार खोल सकते हैं, जहां श्रमिकों को उपभोक्ता वस्तुयें कम दाम पर मिलें और प्रबंधक वर्ग की सहायता और सहयोग से चिंतन केन्द्र भी खोल सकतें हैं ताकि उनकी नैतिक तथा आध्यात्मिक उन्नति हो ।

इस न्यास धन का उपयोग छात्रों को छात्रवृत्तियां देने के लिए, सांस्कृतिक क्रियाकलापों के संवर्धन के लिए, स्वास्थ्य सुविधाओं को बढ़ाने के लिए तथा श्रमिकों प्रबंध-कर्मचारियों और औद्योगिक क्रियाकलाप में संलग्न सभी अन्य लोगों की समग्र सामाजिक, आर्थिक एवं आध्यात्मिक स्थितियों को उन्नत करने के लिए किया जा सकता है । इस धन का उपयोग शोध कार्य पर तथा नैतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों संबंधी व्याख्यान आयोजित करने पर भी किया जा सकता है ।

इस संबंध में यह समझ लिया जाना चाहिए कि अधिकांश उद्योगपतियों प्रबंधकों तथा श्रमिकों के समक्ष सामान्यत: उच्च लक्ष्य होते हैं, और वे एक दूसरे की भलाई करना चाहते हैं । फिर भी इस लोह युग में हर व्यक्ति विभिन्न दबावों के कारण और कतिपय व्यक्तित्व लक्षणों तथा अभिवृत्तियों के कारण अपने प्रिय आदर्शों के अनुसार कार्य नहीं कर पाता । उनमें से अनेक लोग यह जानते हैं कि आंतरिक शक्ति का अभाव उनके धैर्य और अच्छेपन पर बंदिशें लगा देता हैं । किन्तु वे यह नहीं जानते कि अपने सिद्धान्तों की रक्षा के लिए और अपने प्रिय नैतिक मूल्यों को व्यवहार में लाने के लिए वे क्या करें । इस ज्ञान के अभाव में वे नकारात्मक विचारों से और अपने मन के बोझ से छुटकारा नहीं पा सकते जो कि चिड़चिड़ाहट, तनाव तथा क्रोध के रूप में अभिव्यक्त होता है और हड़तालें तथा औद्योगिक अशांति को जन्म देता है ।

प्रेम-बंधनों या भाईचारे को सुदृढ़ कैसे करें ?

अब यह बात ध्यान में रखी जानी चाहिए कि श्रमिकों, प्रबंधकों तथा कारखानों के मालिकों को यह ज्ञान और अनुभूति देकर कि वास्तव में वे आत्मायें हैं और एक सर्वाधिक उदार, सर्वाधिक दयालु तथा सर्वाधिक प्रेममय पिता की संतान हैं, भाई चारे के प्रेम बंधनों को कुछ करना होगा । जब तक उसके समक्ष यह आध्यात्मिक संकल्पना स्पष्ट न हो और जब तक वे परमेश्वर से आध्यात्मिक संबंध न जोड़ें और चिंतन का अभ्यास न करें तब तक उनके भाई चारे की जड़ें गहरी नहीं होगी और उसकी नींव मजबूत नहीं होगी ।

इसलिए, इसका हल यह है कि लोग अपनी अभिवृत्ति को सुधारें और विचारों का नियंत्रण करें । इसीलिए राज योग चिंतन का अभ्यास सुझाया गया है । वह अभ्यासकर्ता को बड़ी आंतरिक शक्ति देता है जिससे वह शांति का अनुभव करता है और नैतिक मूल्यों का पालन कर सकता है और इन सभी बातों से सामंजस्यपूर्ण संबंधों तथा औद्योगिक शांति का निर्माण होता है ।

पुन: श्च, न्यासीत्व का सिद्धान्त, जैसा कि ऊपर समझाया गया है, इस विश्वास पर आधारित है कि आत्माओं के रूप में सभी मानव प्राणी एक ही परिवार के सदस्य हैं और चिंतन के ज़रिए इस संबंध को बढ़ाया और सुदृढ़ किया जाना चाहिए । परिवार के सदस्य एक दूसरे के साथ सहयोग करते हैं और एक दूसरे को स्वीकार करते हैं । उनकी चेतना उन्हें पारस्परिक लाभ के लिए और संपूर्ण परिवार के कल्याण के लिए स्वार्थपूर्ण इरादों का बलिदान करने के लिए प्रेरित करती है । परिवार के सदस्य एक दूसरे के विचारों को सहन करते हैं और उनमें वर्ग युद्ध नहीं होता । उनमें एकता की भावना होती है और वे संपूर्ण परिवार के सामान्य कल्याण का ध्यान रखते हैं । इसलिए मानव जाति रूपी महान परिवार की सदस्यता की भावना को व्यक्ति के विकास की आरंभिक अवस्थाओं से ही विकसित करना होगा । शिशुओं को उसके परिवार तथा विद्यालय में ऐसी शिक्षा प्राप्त होनी चाहिए कि वह अपने सामाजिक दायित्वों को समझे और उसमें सहयोग, सहायता, त्याग, क्षेम, प्रेम और भाई चारे की भावना बढ़े । केवल इसी विचार से क्रांति आ सकती है, औद्योगिक शांति की पुन : स्थापना हो सकती है और वर्ग युद्ध समाप्त हो सकता है ।

सर्व धर्म समन्वय

लेखक: महामण्डलेश्वर आचार्य स्वामी ब्रहमहरि जी महाराज, हरिद्वार

धर्म शब्द का अर्थ वास्तविक अर्थ वह गुण है, जिस किसी के द्वारा धारण किया जाता है ! जैसे अग्नि का धर्म जलाना, प्रकाश का धर्म अंधकार समाप्त करना, पानी का धर्म शीतलता आदि आदि इसी प्रकार मनुष्य का धर्म भी उसका वह कर्त्तव्य है जो समाजिक उत्थान के लिए वह धारण कराता है । गीता में धर्म का अर्थ यही ग्रहण किया गया है और धर्म शब्द कर्त्तव्य के अर्थ में ही प्रयुक्त है । परन्तु अपना कर्त्तव्य भी भली प्रकार पालन करने के लिए मानव को आत्म ज्ञान आवश्यक कहा गया है । 'योग: कर्मसु कौशलम्' का उद्घोष करने वाली गीता का स्पष्ट अभिप्राय यही है कि अपना कर्त्तव्य पालन भी 'फल त्याग' करके किया जायगा तो उस कर्त्ता के कर्म अकर्म बन जाऐंगे, और वह कर्म में लिप्त नहीं होगा । इस प्रकार धर्म कर्म को सुकर्म बनाने की कला है ।

जब हिन्दुओं का शिव, इस्लाम का अल्लाह, सिखों का 'वाहि गुरु' और ईसाइयों का 'गाड' एक ही वस्तु के अलग अलग नाम हैं, इन्हें विभिन्न नामों से सम्बोधित होने वाला परम पदार्थ एक ही है तो इस पर आधारित धर्म अलग अलग कैसे हो सकते हैं ? इस 'परम पदार्थ को न जानने कारण ही विभिन्न सम्प्रदायों में इस प्रकार विवाद हो रहा है जैसे कोई कहे ये जल है, दूसरा कहे कि नहीं ये पानी है, तीसरा कहे यह 'आब' है और चौथा कहे ये वाटर (water) है, तथा इसी बात पर चारों ने विवाद खड़ा कर रखा हो, ऐसे ही एक प्रभु परमात्मा के विभिन्न नामों और पूजा पद्धतियों को लेकर विभिन्न सम्प्रदायों ने विवाद पहले ही खड़ा कर रखा था कि इसमें राजनीति का विष और समाविष्ट हो गया, फिर क्या था कुछ कड़वी कुछ नीम चढ़ी । विभिन्न सम्प्रदायों को ही भ्रान्ति वश धर्म समझा जाने लगा जिसके कारण समूचा समाज फिरकापरस्ती की दहकती अग्नि में धू धू करके जलने लगा और हालत ये हो गई कि—

आदमी को देख कर ही डर रहा है आदमी ।
आदमी को लूट कर घर भर रहा है आदमी ।
आदमी ही मारता और मर रहा है आदमी ।
आदमी हैरान है क्या कर रहा है आदमी ।

वास्तविक धर्म को न समझने के कारण ही ये सब हो रहा है ।

मनु स्मृतिकार मनुजी महाराज ने धर्म के जो दश लक्षण बतलाये हैं, अथवा धर्म के अनिवार्य कार्यों को उल्लिखित करके 'एस: धर्म: सनातन:) कहा है वे मानव मात्र के लिए है । किसी एक देश अथवा काल के लिए ही यह धर्म नही अपितु सर्वत्र सदैव धर्म है । सनातन धर्म का अर्थ है जो धर्म सनातन परमात्मा से जुड़ा है वही सनातन धर्म है । परमेश्वर के अलावा तो विश्व में कोई वस्तु सनातन है नहीं इसलिए सनातन धर्म भी किसी समप्रदाय का नाम नहीं बल्कि शाश्वत धर्म है ।

गीता और उपनिषदो आदि के श्लोको से जो धर्म की ध्वनि निकलती है वह मानव मात्र के लिए है । कुरआन और बाइबिल (अजील) आदि धर्म ग्रंथों के संदेश भी मानव मात्र के लिए हैं, किसी एक जाति, सम्प्रदाय, देश वा काल के लिए नही है । कहने का अभिप्राय ये है कि जब परमात्मा एक है सब मानव उसके बच्चे, भाई भाई है तो धर्म और जाति अलग अलग कैसे हो सकती है । मुझे तो ये भी स्वीकार नहीं कि 'प्रभु एक और रास्ते अनेक' क्योंकि प्रभु एक है और उसे प्राप्त करने का रास्ता भी एक है । हिन्दु कहते हैं प्रभु प्राप्ती सदगुरु से होती है, मुसलिम कहते है कि "मुर्शद की इनायत से मुरीद को अल्लाह का दीदार होता है" तथा इसाई धर्मविलम्बी भी कहते है कि "गाड का रियलाइजेशन लार्ड मास्टर से होता है" (God is realised by the holy sect of Lord Master) फिर रास्ते ही अलग अलग कहाँ हुए ? जिसे हम भक्ति कहते हैं इस्लाम उसे ही 'इश्क हकीकी' कहता है, इसाई मत में वही लव (Love) कहलाता है । बाइबल कहती है 'लव इज गाड' (Love is God) यानी प्रेम ही परमात्मा है । उदासीन कवि गंगादास भी यही अनुभव करते हुए कहते हैं कि—

"कर फिरी सब देश तलाश मैं, पिया पाए प्रेम कुटी में"

अत: न परमात्मा अनेक है, और न उस प्रभु को पाने के मार्ग अनेक है । प्रभू भी एक है और मार्ग भी एक । लक्ष्य भी एक और साधन भी एक, फिर धर्म अनेक कैसे हो सकते हैं । जो धर्मों को अनेक कहते वह धर्म के मर्म को ही नहीं जानते ।

राष्ट्रपिता महात्मा गाँधी ने अपने एकादश नियमों में 'सर्व धर्म समानत्व' की भावना को विशेष स्थान दिया था । उनका उद्देश्य यही था कि भ्रान्तिवश मानव समाज के टुकड़े टुकड़े न हो जाए ।

प्रजापिता ब्रह्मकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय द्वारा सर्व धर्म समन्वय का जो श्रेष्ठ कार्य किया जा रहा है । वह अत्यन्त श्लाघनीय है । हम उसका हार्दिक समर्थन करते हैं ।

शान्ति की खोज

ब्र.कु. कवलेश्वर, वाराणसी

प्रिय बन्धुओं, सन १९७९ की बात है । जब मैं शान्ति की खोज में मन्दिरों, तीर्थों, व मठों में जाया करता था । और बड़े प्रेम से मालाफूल चढ़ाता व मिठाई चढ़ाकर अपने इष्टदेव के पैरों पर माथा फोड़ता । चन्दन लगाने वाले पन्डों को दक्षिणा भी दिया करता । प्रसाद पाकर स्वयं खाता तथा औरों को बांटकर बड़ा गजरा अपने गले में पहना करता । फिर भी मुझे शान्ति नहीं मिलती थी । मैं बहुत परेशान रहा करता था । अपनी जीविकोपार्जन के लिए अच्छी नौकरी भी मिली थी । जिस नौकरी के लिए आज के नवयुवक परेशान रहा करते हैं । फिर भी पता नहीं मन बेचैन क्यों ?

मुझे नहीं भूलता, जिस समय जय गुरुदेव वाराणसी में गंगा के उस पार आये हुये थे । मैं शान्ति के लिए उनके पास गया । उन्होंने मुझे पांच मन्त्र जपने के लिए बतलाये । जिसमें पहला मन्त्र था - निरंजन (आदि पुरुष राम) रूप - जलता हुआ चिराग । ध्वनि - घन्टा शंख । दूसरा मन्त्र था ओंडम (आत्मा) रूप - प्रात:काल का लाल सूर्य । ध्वनि-किंकरी । तीसरा मन्त्र था रारंग (आदि पुरुष कृष्ण) रूप - पूर्णमासी का चन्द्रमा । ध्वनि - वासुरी । चौथा मन्त्र था सोडम (सस्वती) रूप दोपहर का सफेद सूर्य ध्वनि-मृदंग व बादलों की गड़गड़ाहट जैसा । पांचवां मन्त्र था सत्यनाम रूप - करोड़ों सूर्य के समान तेजस्वी ध्वनि-सारंगी की आवाज । योग बतलाया गया कि कान में अंगुली डालकर बड़े ध्यान से उपयुक्त यंत्रों को जपो और सब देवताओं की आवाज़ को सुनते जाओ । करीब दस दिन लगातार मैंने उस साधना को किया । योग लगाते २ कान भी दर्द करने लगा अंगुली भी फटने लगी । देखने वाले हंसी भी उड़ाते थे । जब मैं दफ्तर जाता तो कलम चलाने में भी दिक्कत होती । मुझे कुछ अनुभव नहीं होता था ।

ऊपर से परेशानी बढ़ती गई । घर के लोग जब मुझे कान में अगुंली डालकर चादर ओढ़कर बैठे हुये देखते तो खूब हँसते थे । इतना हंसते थे कि हँसते-हँसते किसी का पेट फूल जाता था । किसी के आखों में आंसू आ जाते थे । लेकिन मैं तो कान में अंगुली डाले रहता था । किसी की आवाज़ सुनता नहीं था । जब योग से खाली होता तो हंसने वाले कहते कि भाई आज हंसते-२ मेरा पेट फूल गया । तो हम कहते डाक्टर के पास जाओ । मैं तो वह आवाज सुनने व रूप देखने के लगन में था कि वह रूप दिखाई दे तो मुझे शान्ति मिले । मैं माथा मारता ही रह गया । न हमें वह रूप दिखाई पड़ता न आवाज़ ही सुनाई पड़ती । केवल कान में अगुंली डालने से भां-भां की आवाज़ आती रही । मैं तो प्रेक्टिस करता रहा कि मुझे पांचो आवाज़, बाजा बजने की तरंग सुनाई पड़े, और मुझे शान्ति मिले । जब मैं परेशान हो गया तो यह छोड़ दिया । और शान्ति के लिए पुन: चला गया बिहार जहां बाल योगेश्वर अपने शिष्यों को परमात्मा का दर्शन कराया करते थे । एक पेड़ के नीचे बैठा जहां बाल योगेश्वर के दो चार शिष्य बैठकर आपस में बात कर रहे थे कि गुरु जी चैलेन्ज देते हैं कि मैं सबको परमात्मा का दर्शन कराऊंगा लेकिन किसी ने दर्शन किया नहीं, जब हम सब उनके शिष्य हैं हमको दर्श नहीं करा सके । यह बात सुनकर किसी तरह घर लौटा और मेरी अशान्ति, बौखलाहट और बढ़ती गई ।

एक दिन हम वाराणसी शहर में आये हुये थे । टाउन हाल के मैदान में विश्व नव निर्माण प्रदर्शनी प्रजापिता ब्रहमाकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की तरफ से लगी हुई थी । मेरे पास एक साईकिल थी जिसमें ताला नहीं था । मैं प्रदर्शनी के अन्दर जाने से हिचकिचा रहा था । इतने में एक आदमी प्रदर्शनी के अन्दर से निकला और बड़े मधुर शब्दों में कहा भाई साहब, साईकिल इधर लगा दीजिए मैं देखता रहूंगा, आप प्रदर्शनी देख आइए । कितना प्यार था उसके शब्दों में, यह वाक्य मुझे ऐसा लगा कि मानो कोई चिर परिचित मेरे घर का हो । मैं भी साइकिल की परवाह न कर अन्दर चला गया प्रदर्शनी देखने । प्रदर्शनी में चित्रों पर भाई व बहनें समझा रहे थीं । मुझे बड़ी शान्ति मिली और दूसरी बात यह आश्चर्य देखने में आया कि भाई बहनों को कभी देखा है ऐसा प्रतीत होता था । मेरे घर से आश्रम २५ कि.मी. दूर भी है । वक्त आया मैं प्रात: ४ बजे पता नहीं कैसे उठता रहा कैसे पहुंचता रहा यह कितनी वन्डरफुल बात है । और नित्य क्रिया के बाद पढ़ने के लिए आश्रम पर ६ बजे पहुंच जाया करता था । अब तो दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति होने लगी और ऐसा अनुभव होने लगा कि परमात्मा हमारे साथ २ है । मैं ६ बजे से ८ बजे तक क्लास करने के बाद अपने नौकरी पर चला जाता था । भूख और प्यास का पता ही नहीं लगता था । नौकरी से छुट्टी मिलने पर घर शाम को पहुंचना खुशी २ भोजन करके परमात्मा की याद में सो जाता था । मानो मुझे स्वर्ग मिल गया । अशान्ति शान्ति में बदल गई घबराहट दूर हो गई पर्दा हट गया । मैं तरसता था शान्ति के लिए, तो शान्ति मिली लेकिन शान्ति अकेले नहीं मिली । शान्ति के साथ पवित्रता सुख भी मिला, यही नहीं अपना दैवी परिवार भी मिला । वाह मेरे बाबा आपकी तो कमाल है जो मैं स्वप्न में भी नहीं सोचा था वह कैसे होता जा रहा है । कितना आनंन्द है । कितनी शक्ति है । कितना प्यार है आपकी याद में । वाह बाबा वाह अपने बच्चों को राज योग सिखा कर कितने सहज से मिल जाते हैं । ●

"जलायेंगे रावण तो बनेंगे पावन"

ब्र.कु. आत्मप्रकाश, आबू पर्वत

(सुरेश अपने छोटे भाई नरेश के साथ दशहरे के त्यौहार के दिन शहर के मुख्य मैदान पर रावण को जलाने का दृश्य देखने जा रहा है)

नरेश—भैया, इस साल तो पिछले साल से और भी उँचा रावण का पुतला बनाया होगा ।

सुरेश—हाँ ज़रूर, हर वर्ष पुतले को उँचा बनाकर ही जलाते हैं ।

नरेश—इसका कारण क्या होगा ?

सुरेश—पता नहीं नरेश ।

नरेश—दूसरी बात यह है कि एक बार रावण को जलाने के बाद और दूसरे साल उसे बनाकर क्यों जलाते होंगे ?

सुरेश—नरेश तुम बहुत भोले हो, ऐसे भी कोई प्रश्न पूछे जाते हैं । अगर आपको पूछना ही है तो वो देखो सामने अपने गाँव के मुखियाजी जा रहे हैं । तेज़ी से चलो, शायद वो तुम्हारे प्रश्नों के उत्तर दे सकेंगे । क्योंकि वो तो दिन-रात रामायण की चौपाई ही रटते हैं ।

(दोनों मुखियाजी के समीप पहुँचकर हाथ जोड़कर नमस्कार करते हैं)

सुरेश—मुखियाजी "राम, राम" . . .

मुखियाजी—राम राम बेटा, शायद तुम भी रावण का मेला देखने जा रहे हो ।

सुरेश—जी, मुखियाजी, मैं तो हर वर्ष यह मेला देखने जाता हूँ । मुखियाजी, अभी अभी नरेश ने मेरे से रामायण के बारे में कुछ प्रश्न पूछे । किन्तु मैं तो उनका उत्तर दे नहीं सका ।

मुखियाजी—बेटा, तुम तो क्या जानोगे रामायण की बातें . . . मेरे से पूछो, मुझे तो रामायण की सारी चौपाई कंठस्थ है । पूछो, बेटा पूछो . . .

नरेश—मुखियाजी, आज दशहरे के दिन रावण का पुतला क्यों जलाते हैं ?

मुखियाजी—बेटा, संसार में व्यक्ति अपने कर्मों से ही निन्दा या स्तुति प्राप्त करता है । इस पापी रावण ने राम की सीता-चुराई थी, इसलिए उसको जलाते हैं ।

नरेश—मुखियाजी, इस रावण के पुतले को जलाने से तो बहुत धन का खर्च होता है । क्या ये नहीं हो सकता है कि एक ही पुतला बनाकर हर वर्ष जलाया नहीं जाय और दशहरे के दिन रावण के कुकृत्यों से मानव को परिचित कराके कुकृत्यों से बचाया जाय । रावण को हर वर्ष जलाने से तो निर्धनता को बढ़ावा मिलता है ।

मुखियाजी—बेटा, उसे हर वर्ष जलाना तो नितांत आवश्यक है चाहे कितना भी खर्चा आये । लेकिन हर वर्ष जलाने का कारण तो मुझे भी पता नहीं है ।

नरेश—मुखियाजी, क्या रावण को दस सिर थे ?

मुखियाजी—हाँ बेटा, दस सिरवाला ही तो रावण था ।

नरेश—तो मुखियाजी, रावण किस मुँह से खाना खाता होगा ?

मुखियाजी—ये तो बड़ी सहज बात है बेटा, दस मुँह में से किसी एक से खाता होगा ।

नरेश—फिर किस मुँह से बात करता होगा ?

मुखियाजी—(सोचते हुए) जिस मुँह से खाना खाता होगा, उसे छोड़कर दूसरे मुँह से बात करता होगा ।

नरेश—फिर अन्य आठ मुँह से वह क्या करता होगा ?

मुखियाजी—(खिन्न भाव से) ये तो मुझे पता नहीं बेटा . . .

नरेश—मुख्याजी, ये तो बताओ रावण का जन्म कैसे हुआ होगा ?

मुखियाजी—रावण का जन्म कैकसी माता द्वारा हुआ था ।

नरेश—(आश्चर्य से) क्या दस सिर वाले व्यक्ति का माता के गर्भ से जन्म होना सम्भव है ?

मुखिया—(नाराज़गी से) इसका भी उत्तर मेरे पास नहीं बेटे . . .

नरेश—मुखियाजी, दस सिरवाला रावण कैसे सोता होगा और जागते समय क्या वो पहले दो ही आँखें खोलता होगा या बीसों एक ही साथ ?

मुखियाजी—(हार खाते हुए) मुझे क्या पता बेटा, मैंने थोड़े ही देखा है उसको . . .

नरेश—तो आपको पता ही क्या है मुखियाजी ?

मुखियाजी—(गुस्से में आकर) तुम्हें कुतर्क करना किसने सिखाया . . . चलो-भागो . . . नहीं तो . . .

(दोनो भाई तेजी से शहर के मैदान की ओर चल पड़ते हैं)

नरेश—(आश्चर्य से) उफ़, कितना बड़ा रावण का पुतला बनाया है । कितना खर्चा आया होगा, भैय्या इसको बनाने के लिए . . . देखो एक तरफ गरीबी बढ़ रही है और दूसरी तरफ लाखों रुपये जड़ पुतला बनाकर खाक में मिलाया जाता है ।

सुरेश—नरेश, ये तो संसार है संसार ! इसके बारे में सोचना ही व्यर्थ है । चलो हमें क्या मतलब है इन बातों से । रावण अभी जल गया । चलो अब घर वापस चलें ।

(वापस लौटते समय रास्ते में तिलक हॉल के गेट पर एक सुन्दर बोर्ड लगा हुआ दिखाई देता है—Welcome, **"रावण अभी जला नहीं"**)

नरेश—अरे भैय्या, यहाँ तो बहुत अच्छी प्रदर्शनी लगी है, देखो तो सही (दोनों भाई अन्दर प्रवेश करते हैं)

ब्रह्माकुमारी—आईए . . . हम आपको बतायेंगे कि वास्तव में रावण अभी जला नहीं ।

सुरेश—बहनजी, अभी ही तो हम रावण को जलते हुए देखकर आये, उसकी राख भी बन गई होगी और आप कहती हो रावण अभी जला नहीं ।

ब्रह्माकुमारी—आईए, तो आपको चित्रोंसहित इसका आध्यात्मिक रहस्य समझायें . . .

आज अधिकतर लोग इस "दश" शब्द के महत्व के बारे में कहते हैं कि रावण के दस सिर थे, इसलिए रावण के वध से सम्बन्धित त्यौहार का नाम "दशहरा" है । वास्तव में "रावण" शब्द का आध्यात्मिक अर्थ है "रुलाने वाला" । 'रावण' शब्द 'माया' का वाचक है क्योंकि माया अथवा मनोविकार ही आत्मा को दुख दिलाने वाले अर्थात् 'रुलाने वाले' हैं ।

सुरेश—बहनजी, तो क्या रावण के दस सिर नहीं थे ?

ब्रह्माकुमारी—'रावण' अर्थात् रुलाने वाली माया के दस सिर वा मुख कहने का भी यह भाव है कि माया के दस मुख्य रूप (१) काम (२) क्रोध (३) लोभ (४) मोह (५) अंहकार (६) ईर्ष्या (७) द्वेष (८) छल (९) हठ (१०) तन्द्रा (आलस्य) है । और जैसे मनुष्य के मुख में बोलने, सुनने, देखने और सोचने की इन्द्रियाँ अर्थात मुँह कान आँखे और मस्तिष्क आदि सम्मिलित हैं । अत: रावण के "दस मुख" कहने का भाव यह है कि जब मनुष्य पहले बताए हुए दस विकारों में से किसी भी विकार के आधीन होकर बोलता, सुनता, देखता और सोचता है मानो कि वह आसुरी संस्कार वाले रावण का गुलाम बनता है ।

सुरेश—बहनजी, रावण ने राम की सीता चुराई थी, क्या यह सच है ?

ब्रह्माकुमारी—जब ज्योतिस्वरूप, सर्वशक्तिवान 'राम' की आत्माओं रूपी सीताएँ उसके श्रीमत की अवज्ञा करती हैं तो रावण दुश्मन उन्हें पकड़कर अपने दुखदाई बन्धनों के जेल में फँसा देता है । वे २५०० साल तक बेहद दुखों के पहाड़ सहन करती हैं । और तंग होकर रावण की जेल से छुड़वाने के लिए अपने परमपिता परमात्मा 'राम' को पुकारती हैं ।

सुरेश—बहनजी, "रावण के नौ सिर कट जाने के बाद फिर लग गए और रावण जो चाहे सो कर सकता था", इसका भावार्थ क्या है ?

ब्रह्माकुमारी—भाईजी, ये गहन बात 'रावण' को 'माया' का वाचक मानने से ही समझ में आ सकती है क्योंकि माया ही अनेक स्थूल और सूक्ष्म रूप धारण करती है और अन्य सभी विकार मिट जाने पर भी अति सूक्ष्म रूप में देहअभिमान शेष रह जाने पर बाकी के नौ विकार बार-बार जग जाते हैं ।

नरेश—बहनजी, रावण का पुतला जलाने के लिए हर वर्ष ऊँचा क्यों बनाते ?

ब्रह्माकुमारी—क्योंकि इस कलियुगी पतित दुनिया में रावण का ही बोलबाला है । दिन प्रतिदिन उसका राज बढ़ता ही जा रहा है अर्थात् सभी के मन पर अपना राज करके दास बनाता रहता है । सभी उससे छुटकारा पाने के लिए अर्थात् जलाने के लिए बरबस प्रयत्न करते हैं लेकिन बजाय छूटने के और ही फँसते जाते हैं । इसलिए उसका पुतला हर वर्ष बड़ा बनाया जाता है ।

सुरेश—बहनजी, इस दुश्मन रावण को कैसे भस्म कर सकेंगे ?

ब्रह्माकुमारी—वास्तव में आज सभी मनुष्यात्माओं के अन्तरमन में ये महाराक्षस रावण छिपा हुआ है । उसे सर्वशक्तिवान परमात्मा "राम के शक्तिशाली याद द्वारा प्राप्त 'योगाग्नि' से ही भस्म कर सकते हैं । उसके सभी शीश ज्ञान-बाणों से उड़ाकर उसका नामोनिशान सदा के लिए मिटा सकते हैं ।

नरेश—बहनजी, दशहरे के बाद ही दिवाली का त्यौहार क्यों मनाया जाता है ?

ब्रह्माकुमारी—जब सदा जागती-ज्योत परमात्मा 'शिव' स्वयं अवतरित होकर मन रूपी मन्दिर अथवा घर में आत्मा रूपी दीपक की बुझी हुई ज्योत ईश्वरीय ज्ञान और योग द्वारा जगाते हैं जिससे रावण पर पूर्णतया विजय प्राप्त होती है और वे आत्माएँ दूसरी मनुष्यात्माओं को भी ज्ञान-योग रूपी दीपक दान करते जिससे इस संसार में रूहानी उजाला फैलता है । फलस्वरूप भविष्य में भारत में श्री लक्ष्मी तथा श्री नारायण का राज्य प्रारम्भ होता है । उससे पूर्व एटम और हाईड्रोजन बम्ब रूपी वास्तविक पटाखे और आतिशबाजी चलती हैं । इसी की यादगार में दशहरे के बाद दिवाली का त्यौहार मनाते हैं ।

सुरेश—बहनजी, आपने इतने प्यार से अपना अमूल्य समय देकर हमें समझाया, अभी हम आपकी क्या सेवा करें ?

ब्रह्माकुमारी—सेवा यही है कि अभी से रावण दुश्मन की सेना को तलाक देकर रामराज्य स्थापन करने हेतु राम की सेना में भरती हो जाओ अर्थात् हनुमान (शक्तिशाली) बनकर इस दुखदाई बेहद लंका को योग अग्नि से भस्म करने में मददगार बनों जिससे इस भारत माँ की गोद में सुन्दर सा स्वर्ग उतर आये ।

दोनो नम्रता से कहते हैं—बहनजी आपकी तथा परमपिता परमात्मा 'शिव' की आज्ञा हमें सहर्ष स्वीकार है, धन्यवाद ।

□

शेष पृष्ठ ३१ का

सिंगापुर : समाचार मिला है—सेवाकेन्द्र पर दो छोटे सेमीनार आयोजित किये गये । विषय थे—जीवन में सफलता की कला और नये युग का साक्षात्कार मिथ्या या सत्य । प्रसिद्ध व्यापारी भ्राता कश्यप तथा थ्योसाफिकल सोसायटी के प्रेजीडेन्ट ने मुख्य अतिथि के रूप में भाग लिया । ब्र.कु. बहने मलेशियन हाई कमिश्नर से भी मिलीं तथा उन्हें पीस चार्टर एवं पीस मैनीफैस्टो भेंट किया । रामकृष्ण मिशन के प्रमुख स्वामी से भी मुलाकात हुई उन्हें भी पीस चार्टर तथा रिलीजस चार्टर दिये गये । वहां डर्ग सेन्टर में ब्र.कु.कमला बहन प्रतिदिन क्लास कराने जाती हैं जिसमें बहुत से लोग रूची लेते हैं ।

फिजी : सेवाकेन्द्र से प्राप्त समाचार के अनुसार फिजी में जन-जन को ईश्वरीय सन्देश देने हेतु 25 मन्दिरों में तथा 15 स्कूल कालेजों में प्रोग्राम रखे गये । दो बार रेडियो तथा अखबारों मों ब्रहमाकुमारी भावना बहन की भेंट वार्तायें प्रसारित तथा प्रकाशित हुई । अभी फिजी में 6 स्थानों पर सेवाकेन्द्रों द्वारा अनेकानेक आत्माओं को ज्ञान का साप्ताहिक कोर्स कराया जा रहा है ।

शरीरधारियों के साथ शुद्ध स्नेह प्रभु प्रेम में बाधक नहीं

ले. ब्र.कु. नलिनी, बम्बई

प्राय: लोगों की यह धारणा बन गई है कि प्रभु पिता से प्रेम और जीव प्राणियों का प्रेम साथ-साथ निभाना कठिन है । ईश्वर से सच्ची प्रीत तभी हो सकती है जब हम इस साकार संसार और इसे विभूषित करने वाली वस्तुओं और व्यक्तियों से नाता तोड़ दें । परन्तु यह विचार धारा कुछ विवेक-संगत नहीं मालूम पड़ती है कि रचयिता से प्यार करने के लिये उसकी रचना से घृणा करनी होगी । माँ का प्यार पाने के लिये माँ के बच्चे को दूर फेंकना होगा । मनुष्यात्मा शरीरधारी है । उसका सम्पर्क इस साकार सृष्टि में शरीरधारी आत्माओं से ही होता है । उनके साथ मिलकर ही वह समाज और संसार का निर्माण करता है उसकी चैतन्यता प्रकट करने वाले सभी कार्य व्यवहार भी उन्हीं के साथ चलते हैं । फिर उनसे दूर होकर उसका अस्तित्व क्या होगा । शरीरधारियों के सम्बन्ध व सम्पर्क से दूर होने की इच्छा रखने वाले व्यक्ति को तो पहले अपने शरीर से ही सम्पर्क और सम्बन्ध समाप्त करना होगा । आत्मा को शरीर से अलग होना पड़ेगा । आत्मा को शरीर से अलग करने का एक मात्र साधन **'मृत्यु'** है । मृत्यु होने पर आत्मा शरीर से स्वत: अलग हो जाती है । कोई भी अपनी मृत्यु एक सेकेण्ड में आत्म-हत्या द्वारा ला सकता है । तो क्या प्रभु प्रेम के लिये **'आत्म-हत्या'** को सहज साधन के रूप में अपनाया जाना उचित होगा ? नहीं, इसे तो कोई भी स्वीकार नहीं करेगा । वास्तव में **'प्रभु-प्रेम'** के लिये न तो अपने शरीर से सम्बन्ध तोड़ना है और न अन्य शरीरधारियों से । इनसे सम्बन्ध रखते हुये ही साथ-साथ प्रभु पिता से सम्पर्क रखना है । सम्बन्ध में स्नेह निहित है क्योंकि स्नेह के सम्बन्ध को ही 'सम्बन्ध' कहा जा सकता है । स्नेह रहित सम्बन्ध को 'बन्धन' की ही संज्ञा देनी पड़ेगी । बन्धन दु:खदाई होता है । स्नेह रहित सम्बन्ध में तो कलह, क्लेश, अशान्ति है जो आदि-मध्य-अन्त दु:ख देने वाली है । परन्तु स्नेह में शान्ति है, तृप्ति है । स्नेह में संगठन है, शक्ति है । स्नेह सहानुभूति की जननी है । जहाँ शान्ति, शक्ति और तृप्ति है वहाँ सुख है । तो क्या शरीरधारियों के स्नेह सुख देने वाले हैं । क्या हमारा आज का अनुभव उसे सुख दायिनी समझता है ?

शरीरधारियों से स्नेह-सम्बन्ध

प्रश्न बहुत सीधा है कि क्या आज शरीरधारियों के बीच जो स्नेह एवं सम्बन्ध है अथवा जिसे आज के मनुष्य स्नेह या प्रेम के नाम से पुकारते हैं वह सुखदायिनी है ? क्या प्रेमियों के विरह गीत इसे सुखदायी सिद्ध करते हैं । क्या प्रेम के क्षणिक उन्मादक आल्हाद के साथ ही घंटे, दिन मास और वर्षों उत्पीड़न प्रेमियों का साधारण अनुभव नहीं है ? माँ के वात्सल्य और ममता में जहाँ एक ओर आत्म सन्तोष और आत्म विभोरता है वहीं बच्चे से सम्भावित विरह की आशंका अथवा वास्तविक विरह-हृदय विदारक पीड़ा भी उत्पन्न करती दिखाई पड़ती है । प्रीत की मारी दु:खयारी विरहनी गाती है—

मैं जो ऐसा जानती प्रीत करे दु:ख होय ।
नगर ढिंढोरा पीटती प्रीत न करियो कोय ।।

तो फिर क्या मनुष्यों के स्नेह सम्बन्ध को दु:खदाई कहा जाय ? नहीं, ऐसा कैसे कह सकते हैं ? 'स्नेह' तो परमपिता परमात्मा का मुख्य गुण है । उन्हें सृष्टि के सभी शरीरधारियों से अति स्नेह है और इसी कारण उन्हें प्रेम का सागर कहते हैं । सारे ब्रह्माण्ड और सृष्टि का आधार ही स्नेह, सम्बन्ध अथवा आकर्षण है । चैतन्य मनुष्यात्माओं की तो बात ही क्या परन्तु जड़ प्रकृति भी स्नेह से ही बँधी हुई है । महाकाश में सूर्य, चाँद, सितारे, पृथ्वी आदि सारा सौर मण्डल का अस्तित्व ही आकर्षण (Gravitation) पर आधारित है, विकर्षण (Repulsion) पर नहीं । संसार में हम जो भी वस्तुएँ देखते हैं वे सभी भिन्न-भिन्न तत्वों (Elements) के आपसी सम्बन्ध (Integration) के ही फल हैं । एक दूसरे से स्नेह पूर्ण रीति चलना ही प्रकृति का नियम है । तो ऐसे स्नेह को दु:खदाई कैसे कह सकते हैं ? इस विरोधाभास का एक ही कारण है कि जहाँ शुद्ध सम्बन्ध सुखदायी है वहीं उसमें अशुद्धता मिलने से वह दु:खदायी हो जाता है । शुद्ध फल जहाँ शक्ति देता है, वहीं सड़ा फल खाने से बीमारी आती है । शुद्ध दूध में एक बूँद भी नींबू का रस पड़ जाय तो जैसे दूध का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, वैसे ही

शुद्ध स्नेह में विकारों की थोड़ी गन्ध आने पर उसका सुखदायी स्वरूप समाप्त हो दुःखदायी हो जाता है । अतः यह बात स्पष्ट रूप से समझनी है कि जिस प्रकार रचयिता पिता परमात्मा स्नेह प्रदान करता वैसे ही यदि हमारा उसकी 'रचना' शरीरधारी मनुष्यात्माओं से भी स्नेह-सम्बन्ध है तो वह भी सुख और पूर्ण सुख देने वाला है । परन्तु परमात्मा पिता निर्विकार हैं । उनकी अपनी 'रचना' (सतयुगी दैवी सृष्टि की मनुष्यात्मायें) भी निर्विकार हैं । तो सुख के अभिलाषी को शरीरधारियों के साथ अपना स्नेह सम्बन्ध भी निर्विकार ही रखना होगा ।

शुद्ध स्नेह में विकार की प्रवेशता

शुद्ध स्नोह निर्मल जल है । पँच विकार इस जल को गन्दा करते हैं । इसमें पहला नम्बर तो **'काम विकार'** ही है जिसे 'महाशत्रु' की संज्ञा दी गई है । यह 'प्रेम' का नाम बदनाम करता है । आध्यात्मिक दृष्टि कोण से पिता परमात्मा के दो बच्चे—स्त्री शरीरधारी आत्मा व पुरुष शरीरधारी आत्मा—आपस में बहन-भाई हैं । परन्तु वे काम विकार की गन्दी नाली में गिर स्वयं को गन्दा पतित बनाते हैं । पवित्र स्नेह-सम्बन्ध में जब काम की दुर्गन्ध आ जाती है तो वह दुर्गन्ध क्रोध विकार को भी जन्म दे देती है । काम पिपासा तृप्त न होने पर क्रोध का आवेश आता है । कभी अपने आप पर कभी अन्य पर । दोनों ही अवस्था में वह मनुष्य को दुःखी और अशान्त करती है । ऐसे दुःख रूप विकार के बीज से जो सन्तान उत्पन्न होगी वह भी भला सुखदायी कैसे हो सकती है ? उसमें भी मनुष्य का अशुद्ध मोह हो जाता है जिस मोह के कारण वह सदा भयभीत और आतंकित रहता है कि उसके बच्चे का कोई अनिष्ट न हो जाय । अनिष्ट होने पर वह व्यथित हो कराहता रहता है । तो इस प्रकार हम देखते हैं कि जहाँ एक पिता परमात्मा की सन्तान को याद रख आपस में शुद्ध आत्मिक बहन-भाई का स्नेह रूप नाता समझ चलने में सुख पाते हैं वहीं विकारों में फँसने के कारण उन्हें दुःख उठाना पड़ता है ।

यही नहीं, जहाँ काम विकार का सम्बन्ध नहीं भी है परन्तु दो स्नेही अपने शुद्ध आत्म स्वरूप को और अपने स्नेही अथवा स्नेह भाजन के आत्म स्वरूप को ध्यान में न रख उनके शरीरों में बुद्धि फँसा कर चाहना करते हैं कि स्नेही सदा सन्मुख रहे । आँखें उसे देखती रहें । कान उसकी बातें सुनते रहें । सान्निध्य और सामीप्य का सुख मिलता रहे वह भी दुःख ही पाते हैं क्योंकि उनका स्नेह शरीरधारी आत्मा से न होकर 'शरीर' से होता है । शरीर नश्वर है । इस क्षण है दूसरे क्षण नहीं । सामाजिक बंधन भी दो शरीरों को दूर होने के लिये मजबूर कर देते हैं । परन्तु इस बिछुड़ने के वियोग में प्रेमी विरह की अग्नि में जलते दुःख पाते रहते हैं । अन्य दूषित भावनायें भी स्नेह को दुःख का कारण बना देती हैं । हम उन अन्य आत्माओं से जिनको हमने 'स्नेह' दिया है या 'सहानुभूति' दिखाई है उनसे हम बदले में स्नेह व सहानुभूति की आशा रखने लगते हैं अथवा दूसरे से हमें स्नेह और सहानुभूति मिली है तो हम उससे और अधिक की आशा करने लगते हैं । इन आशाओं के पूरा न होने पर हमें दुःख होता है और कभी क्रोध भी आता है । सोचने की बात है कि वह स्नेह कैसा जिसमें क्रोध का मिश्रण हो । परन्तु आज के मनुष्य की वास्तविक स्थित में यह जहाँ-तहाँ देखने को मिलता है । तो यह क्या है ? यह है स्नेह में विकारों की प्रवेशता जिसके कारण सुखदायी वस्तु दुःखदायी बन जाती है । यह है स्नेह के शुद्ध स्वरूप के अज्ञानता का फल ।

स्नेह का शुद्ध स्वरूप

शुद्ध स्नेह में न कभी 'देना' होता है न 'पाना' होता है । यह आत्मा की स्वाभाविक मूलभूत स्थिति है । जब स्नेह में 'देने' और 'पाने' की दुर्गन्धि भरती है तभी वह दुःखदायी बन जाता है । स्नेह तो आत्मा का एक मूल गुण है जिसमें स्थित रहने पर आत्मा का अपने पिता परमात्मा के साथ ही साथ अन्य सभी आत्माओं के साथ एक स्वाभाविक प्रेममय सम्बन्ध रहता है । साथ ही साथ किन्हीं विशेष आत्मा या आत्माओं के साथ विशेष स्नेह सम्बन्ध भी हो सकता है । परन्तु यह सामान्य स्नेह और विशेष स्नेह का अन्तर भी केवल उतना ही और वैसा ही होगा जैसे प्रभु पिता का स्नेह सृष्टि की सर्व आत्माओं के प्रति सामान्य और उनके द्वारा बताये गए मार्ग पर चल पवित्र जीवन बिताने वालों के साथ विशेष है । परन्तु अपने विशेष स्नेह भाजन बच्चों पर कर्मानुसार आये हुए दुःख कष्ट को देख वह विचलित नहीं होता । क्योंकि वह प्रेम का सागर होने के साथ ही साथ ज्ञान का सागर भी है । उसे अपने और अपनी रचना के शुद्ध स्वरूप व शुद्ध सम्बन्ध का पता है । उसे यह मालूम है कि उसका अपने बच्चों से बिछुड़ना होता ही नहीं । उसने स्नेह सम्बन्ध का स्वरूप ही इतना सूक्ष्म तीव्र गति वाला रक्खा है कि किसी क्षण भी मिलने में कोई कठिनाई नहीं हो सकती । वह स्वरूप है विचारों (Thoughts) का । विचार की गति तो इतनी तीव्र है कि क्षण में कहीं भी पहुँच सकती है । हम जब दूर देश निवासी पिता

परमात्मा से योग लगाते हैं तो विचारों का सामीप्य ही तो स्थापित करते हैं । स्थान की दूरी आत्मा और परमात्मा के स्नेह में बाधक नहीं होती, तो दो शरीरधारी आत्माओं के बीच में दूरी कैसे बाधक हो सकती है । विरह की व्यथा का कोई कारण ही नहीं रहता । जब हम अपने शुद्ध प्रेममय और ज्ञानमय स्थिति में अन्य-अन्य आत्माओं को ज्ञान-दृष्टि से देखते हुए उनसे स्नेह रखते हैं तो हमें किस प्रकार का दुःख नहीं होता, दुर्बलता नहीं आती । हम आशा और निराशा के झूले में नहीं झूलते । अभी हँसे अभी रोये की आँख-मिचौनी नहीं होती । इस शुद्ध स्नेह में सुख है जिसे अतीन्द्रिय सुख कहते हैं । जैसे हम पिता परमात्मा का सुख इन्द्रियों से परे होकर पाते हैं वैसे ही अन्य शरीरधारी आत्माओं के साथ का सुख भी इन्द्रियों से परे होकर लेना है । इस स्नेह सम्बन्ध में वह शान्ति है जिसमें अशान्ति कभी आती नहीं । इस स्नेह में ही शक्ति है । वह शक्ति जिसके कारण शिवशक्तियों का युग-युग तक मन्दिरों में गायन और पूजन होता है । इन शक्तियों को दुःखी, अशान्त, पतित सृष्टि से इतना अगाध स्नेह था कि सर्व प्रकार के कष्ट और यातनायें सहन करते हुए भी उन्होंने सृष्टि को पतित से पावन बनाने में प्रभु पिता का हाथ बँटाया । स्नेह में शान्ति है, सुख है, शक्ति है, परन्तु तब, जब स्नेह का स्वरूप शुद्ध है । इसमें रचयिता परमात्मा और उसकी 'रचना' आत्मा दोनों के साथ समान रूप से साथ-साथ प्रेम रहता ही है ।

यही स्नेह जब विकारों से ग्रसित हो जाता है तो 'शरीरधारी' के स्थान पर 'शरीर' में फँस आदि-मध्य-अन्त दुःख पाता है । विकारी कर्मों के कारण वह 'कर्मबन्धन' में बँधता जाता है । वह न स्वयं सुख-शान्ति पाता है न दूसरों को दे सकता है । परमात्मा पिता से प्रीत जोड़ने के लिए इस विकारी स्नेह सम्बन्ध को तो अवश्य ही तोड़ना पड़ेगा, कर्मबन्धन से मुक्त होना होगा । पवित्र भी बनना पड़ेगा । परन्तु शरीरधारियों के साथ शुद्ध स्नेह इस प्रभु प्रेम में तनिक भी बाधक नहीं बल्कि साधक है । स्नेह बहुत उच्च कोटि की विधि है । परन्तु यह व्यक्तिगत आत्माओं के ऊपर निर्भर करता है कि वे उसे शुद्ध रूप में अपनाकर सुख पायें और सुख देवें अथवा उसे 'कर्मबन्धन' का रूप दे दुख व अशान्ति की अग्नि में कष्ट पावें ।

"याद रख !"

(ब्र.कु. राज कुमारी मजलिस पार्क, देहली)

लेन-देन, सहयोग-स्नेह,
आप-तुम, वे और यह,
नहीं गलत कुछ भी,
होगा पर सुखदायी तभी,
जब मेरे-तेरे बीच हो शिव बाप लवली,
खिसका गर बाप तो माया यह डटी ।
याद रख !
सावधानी हटी ! दुर्घटना घटी !!

बात-चीत, सम्पर्क-सम्बन्ध
मेल-जोल, हर्ष-अभिनन्दन
सुन ! नहीं बुरा कुछ भी
रह सकेगा पर तू 'पावन' तभी
जब मेरे-तेरे बीच हो 'मर्यादा' तभी
जब मेरे-तेर बीच हो 'मर्यादा' सखी
खिसका गर ज्ञान तो माया यह डटी
याद रख !
सावधानी हटी ! दुर्घटना घटी !!

देश-विदेश, वेश-परिवेष,
खान-पान, आगमन-गमन,
मना नहीं कुछ भी,
पर शोभेगा सिर्फ तभी;
कराए प्रत्यक्षता जब बाप की, न कि आप की
न कराई तो समझना माया आ डटी
याद रख !
सावधानी हटी ! दुर्घटना घटी !!

बाप के दर पे बस यही चाहिए,
हो अलौकिक चलन और रुहानी नजर ,
बस फिर चाहे कहीं भी आइए-जाइए,
भूले गर श्रीमत तो बनोगे बन्धनी,
याद रख !
सावधानी हटी ! दुर्घटना घटी !!

हम और आप पहले भी थे अब भी हैं और फिर भी होंगे

ले. ब्रह्मकुमारी कमलमणि, कृष्णा नगर दिल्ली

अगर हम किसी मनुष्य को कहें कि कल्प पहले भी उसने आज के दिन इस समय यह कपड़े पहने हुए थे और वह इन्हीं शब्दों में बात कर रहा था तो उसे यह बात बहुत अजीब लगेगी परन्तु यह बात है सोलह आने सच्ची । यह सिद्ध किया जा सकता है कि कल्प पहले जो कुछ हुआ था, आज वही हो रहा है, उदाहरण के तौर पर, कल्प पहले भी आन्ध्रप्रदेश में ऐसे ही यह राजनीतिक ड्रामा हुआ था, अब फिर हुआ है । इस सिद्धान्त को 'इतिहास की पुनरावृत्ति' कहते हैं । अब समझने की बात यह है कि क्या इतिहास की हूबहू पुनरावृत्ति होती है या लगभग आवृत्ति होती है ।

कई इतिहासकारों की मान्यता है कि एक निश्चित समय के बाद ऐतिहासिक परिस्थितियाँ आ उपस्थित होती हैं और पहले उन-जैसी परिस्थितियों में जैसी घटनाएँ घटी होती हैं वैसी ही अब फिर घटती हैं । उदाहरण के रूप में वे कहते हैं कि पहले अमुक प्रकार के एक व्यक्ति के हाथों में देश की बाग-डोर आ गई थी जिस कारण वह परिस्थितियाँ बदल कर अमुक प्रकार की हो गई थीं और ऐसे होते-होते आज पुन: वैसी ही परिस्थितियाँ हैं तो वैसा ही कोई व्यक्ति देश की बाग-डोर को सम्भालेगा जिससे परिस्थितियाँ पुन: बदल कर वैसी ही हो जाएँगी । भारत के आदि सनातनी लोग भी इसी सिद्धान्त के अनुसार मानते हैं कि गीता के भगवान् के अवतरण के समय यद्यपि वेद, वेदान्त, शास्त्री, आचार्य इत्यादि थे परतु फिर भी अत्याचार, दुराचार होता था, जिस कारण ही अवतरित होकर भगवान् ने सत्य ज्ञान दिया था और धर्म की पुन:स्थापना की थी; आज जबकि पुन: वैसी परिस्थितियाँ हैं तो इससे संकेत मिलता है कि अब फिर भगवान के पुन: अवतरण का और फिर से धर्म की स्थापना करने का समय आ गया है । इतिहासकारों अथवा विचारकों की भाषा में इस तथ्य को इतिहास की पुनरावृत्ति (Repetition) कहा जाता है । इतिहासकार कहते हैं 'History repeats itself' अर्थात् इतिहास की पुनरावृत्ति होती है ।

पुनरावृत्ति दो प्रकार की है

अब पुनरावृत्ति मुख्यत: दो प्रकार की होती है । इनमें से एक पुनरावृत्ति तो वर्ष के चार ऋतुओं की भाँति होती है । वर्ष में चार ऋतुओं का चक्कर पुनरावृत्त तो होता है परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि पिछले किसी वर्ष किसी मास में जो तापमान अथवा ऋतु रहा इस वर्ष भी उस मास में हूबहू वैसा ही तापमान अथवा वैसी ही ऋतु हो । हाँ, लगभग वैसा ऋतु हो सकता है ।

दूसरी प्रकार की पुनरावृत्ति को स्पष्ट करने के लिए घड़ी का उदाहरण दिया जा सकता है । घड़ी की सुइयाँ एक चक्कर पूरा करने के पश्चात पुन: हूबहू पहले वाले स्थान पर पहले के समान आ जाती हैं । उनकी शुरुआत की स्थिति और चक्कर पूरा करने के बाद की स्थिति में नाम मात्र भी अन्तर नहीं होता । इसे identical repetition अर्थात **"हूबहू पुनरावृत्ति "** कहा जाता है ।

विश्व के इतिहास की पुनरावृत्ति

अब इतिहास के जानकारों को पहली प्रकार की पुनरावृत्ति का तो पता है । उदाहरणार्थ वे समझते हैं कि भारत में जब हिंसा, द्वेष, कर्मकाण्ड इत्यादि बहुत बढ़ गया तो उन परिस्थितियों में बुद्ध-जैसे व्यक्ति का आना हुआ जिससे कि उन परिस्थितियों पर अच्छा प्रभाव पड़ा । ऐसे ही जब अन्यान्य देशों में वैसी परिस्थितियाँ हुईं तो क्राइस्ट इत्यादि ने वहाँ-वहाँ परिवर्तन लाया परन्तु इतिहासकारों को यह मालूम नहीं है कि सतयुग से कलियुग तक के समय को यदि 'कल्प' कहा जाय तो एक कल्प में जो कुछ भी वृत्तान्त होते हैं, वे कल्प के बाद पुन: हूबहू पुनरावृत्त होते हैं । उदाहरणार्थ, यह लेख कलियुग में, आज जिस दिन, जिस समय जिस कागज पर जैसे लिखा गया, कल्प बाद इसी प्रकार इसी समय, इसी कागज़ पर पुन: ऐसे ही लिखा जाएगा और पाठक भी इसे ऐसे ही पढ़ेंगे और पढ़ने पर जो विचार उनके मन में उठे, कल्प के बाद भी हूबहू वैसे ही उठेंगे । पाठकों के लिए यह एक महान आश्चर्य की बात होगी परन्तु परमपिता परमात्मा जो इस सृष्टिरूपी नाटक के कथानक अथवा विश्व-इतिहास के पूर्ण ज्ञाता है, इस विषय पर जो स्पष्टीकरण देते हैं, उसका कुछ संक्षिप्त उल्लेख यहाँ किया जाता है :—

इतिहास की 'हूबहू पुनरावृत्ति' का कारण है संकल्पों की पुनरावृत्ति

इस कर्मक्षेत्र पर मनुष्य जो कर्म करता है, उनसे पहले मन में संकल्प उठता है । अत: यदि मनुष्य के संकल्प किसी निश्चित समय के बाद हूबहू पुनरावृत्त होते होंगे तो संसार की ऐतिहासिक पुनरावृत्ति की सम्भावना हो सकती है । अब यह सिद्ध किया जा सकता है कि मनुष्यात्माएँ इस सृष्टि रूपी लीला धाम में जो कुछ भी कर्म अथवा लीला करती हैं, उनके संस्कार (अथवा लीन संकल्प) पहले ही से स्वयं आत्मा ही में भरे होते हैं । अर्थात्, यह स्पष्ट किया जा सकता है कि 'मन' आत्मा से कोई पृथक वस्तु नहीं है । इसलिए इस संसार में जो भी वार्ताएँ होती हैं, वे मानो पहले ही से निश्चित हैं क्योंकि उनके लिए आत्मा में पहले ही से संकल्प लीन हैं । इसलिए ही कहा जाता है कि—'होनी हो के ही रहती है' अथवा 'होगा वही जो राम रचि राखा' अर्थात हर-एक आत्मा का इस लीला में अपना पार्ट (नाटकीय अभिनय) पहले से निश्चित है ही और इस लीला (पार्ट) अथवा कर्म के संस्कार आत्मा ही में हैं । जब आत्मा इस पृथ्वी पर आकर जन्म-जन्म

नया शरीर रूपी वस्त्र धारण कर, इस पृथ्वी रूपी स्टेज (मंच) पर नये स्थान में नये सम्बन्ध जोड़, अपना पार्ट करती-करती कल्प के अन्त तक अपनी सारी लीला कर चुकती है तो वापिस अपने परलोक रूपी घर को लौट जाती है । अगले कल्प में वहाँ से फिर आकर वह अपना पार्ट (कर्म) हूबहू दुहराती (पुनरावृत्त करती) हैं क्योंकि अपने पार्ट के संस्कार तो उसमें हैं ही । इस रहस्य को ग्रामोफोन रेकार्ड के दृष्टान्त के द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है :—

ग्रामोफ़ोन रेकार्ड में गाना बजने से पूर्व भी लीन रूप (merged form) में होता ही है । जब रेकार्ड को चलती थाली पर रख कर, उस पर सूई लगाई जाती है तो गीत जो पहले लीन रूप में था, व्यक्त होने लगता है । परन्तु गीत का जो भाग बजता है वह पुन: अव्यक्त हो रेकार्ड में रहता ही है । किसी भी समय गाने का केवल वही भाग बजता है (व्यक्त होता है) जो सूई के नीचे होता है और एक बार सारा गीत बज चुकने के बाद रेकार्ड में भरे गाने को थाली पर, सूई के नीचे रखकर हूबहू पुनरावृत्त किया जा सकता है । ऐसे ही आत्मा जब इस पृथ्वी रूपी चलती थाली से परे परमधाम में होती है तो उसके सारे पार्ट (संसार में होने वाले समस्त कर्म) उसमें लीन अथवा अव्यक्त होते ही हैं । जब वह आत्मा, इस संसार रूपी सूई के अनुकूल उसके अव्यक्त (लीन संकल्पों) का जो भाग संकल्पों के रूप में व्यक्त होता जाता है, आत्मा उसे खेलती (कर्म में लाती) जाती है । फिर यही पार्ट आत्मा ही में अव्यक्त (लीन) हो जाता है । कल्प के अन्त में जब आत्मा निर्वाणधाम में जाकर अशरीरी अवस्था में रहकर अगले कल्प में फिर जब संसार रूपी चलती थाली पर, समय रुपी सूई के नीचे आती है तो उसका पार्ट (कर्म) हूबहू पुनरावृत्त होता है ।

इस प्रकार प्रत्येक मनुष्यात्मा का, समय रूपी सूई का तथा पृथ्वी रूपी चलती थाली का अपना-अपना पार्ट हूबहू पुनरावृत्त होने के कारण यह सृष्टि रूपी लीला और इसका इतिहास हूबहू पुनरावृत्त होता है ।

संसार के अनादि होने के कारण पुनरावृत्ति

गीता के भगवान के महावाक्य हैं कि यह संसार अनादि और अविनाशी है । इसीलिए, इस संसार को 'संसार चक्र' भी कहा जाता है क्योंकि चक्कर का न आरम्भ होता न अन्त । अनादि और अविनाशी गति को चक्र द्वारा ही चित्रित किया जा सकता है । इससे सिद्ध है कि कोई भी वृत्तान्त जो एक बार भी इस संसार में घटता है वह चक्र अर्थात कल्प पूरा होने पर पुन: आवृत्त होगा ही । इसीलिए ही भगवान के महावाक्य हैं कि यह सृष्टि चक्र के समान मेरी अध्यक्षता में घूमती रहती है ।

परमात्मा के कर्त्तव्य पुनरावृत्त होने के कारण इतिहास की पुनरावृत्ति

भगवान के महावाक्य हैं कि संसार में जब-जब धर्म-ग्लानि होती है तब-तब मैं अवतरित होकर अधर्म का विनाश और धर्म की पुनर्स्थापना करता हूँ । अब जैसे हर कल्प में हूबहू पहले के समान धर्मग्लानि होती है और परमात्मा का अपना पार्ट (स्थापना, विनाश और पालना के कर्त्तव्य) पुनरावृत्त होता है, वैसे ही देवताओं का तथा इब्राहीम, बुद्ध, क्राईस्ट, शंकराचार्य, नानक, दयानन्द इत्यादि मुख्य ऐतिहासिक व्यक्तियों का और इस प्रकार सब मनुष्यात्माओं का पार्ट भी कल्प के बाद हूबहू पुनरावृत्त होता है ।

परमात्मा के त्रिकालदर्शी होने से इतिहास की पुनरावृत्ति का होना सिद्ध है ।

परमपिता परमात्मा को 'त्रिकालदर्शी' कहा जाता है । इसका अर्थ यह हुआ कि परमात्मा तीनों कालों को सदा पहले से ही जानता है । भविष्य में किस देश में किन मनुष्यों द्वारा क्या होगा, यह उस साक्षी और सर्वज्ञ आत्मा को पहले से ही मालूम है । इससे यह सिद्ध हुआ कि भविष्य में जो कुछ होने वाला है, वह पहले से ही निश्चित (Pre-ordained) है क्योंकि तब ही तो परमात्मा उसको पहले ही से जानता है । अब क्योंकि प्रत्येक क्षण अपने से पहले बीते हुए समय की भेंट में भविष्य ही माना जा सकता है, अत: सिद्ध हुआ कि यह सृष्टि रूपी सारी लीला पहले से ही निश्चित है । अर्थात् इसका इतिहास पूर्व-निश्चित (Pre-determined) है । इसका अभिप्राय यह हुआ कि विश्व का इतिहास कल्प-कल्प पुनरावृत्त होता है क्योंकि यदि ऐसा न हो तो परमपिता परमात्मा पहले ही से आने वाले अनेक कल्पों के वृत्तान्त को कैसे जान सकें और मनुष्यात्माओं को समझा सकें ? सृष्टि रूपी इतिहास के समय को कितना भी लम्बा माना जाय, अनादि और अनन्त काल से अधिक तो नहीं मान सकते ! अब अनादि और अनन्त काल को चक्र द्वारा ही चित्रित किया जा सकता है; अत: स्पष्ट हुआ कि सतयुग से लेकर कलियुग तक की सृष्टि का चक्कर कल्प-कल्प अगण्य बार हूबहू पुनरावृत्त होता आया है और होता रहेगा, जिस कारण ही संसार को **'अनादि'** और परमात्मा को 'त्रिकालदर्शी' कहा जा सकता है ।

'वृत्ति' और 'वृत्तान्त' शब्दों द्वारा स्पष्टीकरण

प्रत्येक मनुष्यात्मा का यह स्वभाव है कि वह परमधाम अथवा परलोक (ब्रह्मतत्व) से इस पृथ्वी रुपी मंच पर अथवा कर्मक्षेत्र पर आकर खेल करना और देखना चाहती है और व्यवहार अथवा कर्मों द्वारा सुख तथा प्रसन्नता चाहती है । प्रत्येक आत्मा का सृष्टि के चक्कर में आने का जो अनादि स्वभाव है तथा इस लोक में अपने पार्ट के लीन संकल्प हैं, उसे 'वृत्ति' (अर्थात् चक्कर में आने वाले संस्कार) कहा जाता है और मनुष्यात्मा जो कर्म करती है, उन्हें 'वृत्तान्त' कहा जाता है । अब 'वृत्त' कहते हैं 'चक्कर' को । अत: 'वृत्ति' शब्द से ही सिद्ध होता है कि मनुष्यात्मा का प्रत्येक संकल्प एक वृत्त अर्थात् चक्कर पूरा करने के बाद फिर हूबहू वैसे ही उठता है । 'वृत्तान्त' शब्द से

(शेष पृष्ठ २८ पर)

परमात्मा को याद करना क्यों आवश्यक है ?

ले. ब्रह्माकुमारी सुधा, शक्तिनगर, दिल्ली

भक्ति मार्ग और ज्ञान मार्ग दोनों में ही परमात्मा को याद करने पर बहुत बल दिया गया है । गीता में भी भगवान के महावाक्य हैं कि हे अर्जुन, देह सहित देह के सर्व सम्बन्धों को बुद्धि से भूलकर तू मन से मेरा हो जा अर्थात तू अपना मन मुझमें लगा तो मैं तुझे तेरे पापों से मुक्त कर दूँगा । परमपिता परमात्मा शिव भी कहते हैं कि मीठे बच्चे, मुझे निरन्तर याद करने का अभ्यास करो । ऐसा सुनकर कुछ लोगों के मन में प्रश्न उठता है कि क्या परमात्मा खुशामद पसन्द है ? आखिर उसे निरन्तर याद करने की आवश्यकता ही क्या है ? मनुष्य को जीवन में श्रेष्ठ कर्म करने चाहिए, निकृष्ट नहीं, यह तो सभी समझते हैं तो इसमें परमात्मा को बीच में लाने की क्या जरूरत है ? प्रश्न सुनने से तो ऐसा ही लगता है कि बात तो बिल्कुल ठीक है । मनुष्य को अच्छे कर्म करने चाहिएँ ; किसी को दुख मत दो, धोखा मत दो, छल कपट न करो लेकिन परमात्मा को क्यों याद करे ; परन्तु यह भी एक विचारणीय विषय है । आखिर परमात्मा जिसको बुद्धिवानों की बुद्धि कहा जाता है, दिव्य-बुद्धि दाता माना जाता है, ज्ञान का सागर कह उसकी महिमा गाई जाती है, अगर वे कुछ महावाक्य उच्चारण करते हैं तो उनमें कुछ तथ्य तो अवश्य ही होगा । हाँ, हम यह कहें कि वह तथ्य क्या है, वह गहराई क्या है, हम उसका स्पष्टीकरण चाहते हैं । अत: अब हम आपको बतायेंगे कि परमात्मा ने इसके बारे में हमें क्या समझाया है ।

जैसी स्मृति वैसी स्थिति

अंग्रेजी में एक कहावत है : As you think so shall you become अर्थात जैसा आप सोचोगे, वैसा बन जाओगे । यह कहावत एकदम सत्य है । आपने कई बार जीवन में अनुभव किया होगा । मान लीजिए १० वर्ष पूर्व आपके जीवन में कोई ऐसी घटना घट गई थी जिसमें किसी ने आपका अपमान कुछ लोगों के बीच कर दिया हो, आपको परेशान किया हो अथवा कुछ कटु शब्द कह दिये हों । अब अचानक बैठे-बैठे ही, वह घटना आपके स्मृति पटल पर एक फिल्म के दृश्य की तरह छा जाती है तो एकदम आपका चेहरा उदास, मायूस सा हो जाएगा । जबकि वर्तमान समय तो आपको किसी ने कुछ कहा ही नहीं, किसी से कुछ बात भी नहीं हुई, तब भी आपके व्यवहार में एक अजीब-सा परिवर्तन आ जाएगा । किसी से आप चिड़चिड़ा कर बोल उठेंगे और किसी को नाराज कर बैठेंगे । इसी परिस्थिति के विपरीत अगर किसी को कोई ऐसी घटना की स्मृति आ जाती है जिसमें उसे आदर, सत्कार, इज्जत, प्रशंसा मिली हो, तो उसके चेहरे पर उस समय एक मधुर मुस्कान-सी आ जाती है । कोई पूछता है कि आप मुस्करा क्यों रहे हो, ऐसी भी क्या बात हुई हम भी तो सुनें । वह व्यक्ति बोल उठेगा - "कुछ नहीं बस ऐसे ही" । परन्तु वास्तव में ऐसे ही नहीं, उसकी स्थिति में परिवर्तन उसकी स्मृति से आया है । जब स्मृति बदलती है तो स्थिति बदलती है, स्थिति बदलती है तो कृति अर्थात कर्म अर्थात व्यवहार भी बदल जाता है ।

अब हर प्राणी चाहता है कि मेरे जीवन में शान्ति बनी रहे । मैं सदा आनन्दित रहूँ, मेरे कर्म श्रेष्ठ हों लेकिन कई प्रकार की प्रतिकूल स्मृतियों के कारण उसकी वह स्थिति नहीं बन पाती और चाहते हुए भी कर्म श्रेष्ठ नहीं हो पाते । इसलिए परमपिता परमात्मा का कहना है, अथवा यों कहें कि फरमान है : "बच्चे, मुझ शान्ति के सागर, आनन्द के सागर . . . परमपिता परमात्मा से बुद्धि का योग लगाओ, मुझ सुख दाता प्रभु को अपने मन में बसाओ अर्थात मेरी पावन स्मृति में रहो तो आपकी मानसिक स्थिति स्वत : ही शान्त और आनन्दित हो जाएगी । आपका जीवन सुख-शान्ति से भरपूर हो जाएगा ।"

दिव्य गुणों की पराकाष्ठा और व्यवहार शुद्धि

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । समाज में विचरण करते हुए उसे अपने व्यवहार (Manners, Etiquettes) पर बहुत ध्यान देना पड़ता है । अगर किसी व्यक्ति का व्यवहार श्रेष्ठ नहीं, उसके जीवन में दिव्य गुणों का अभाव है तो वह लोक प्रिय नहीं बन सकता । समाज में आदरणीय अथवा माननीय स्थान नहीं प्राप्त कर सकता ।

अब परमपिता परमात्मा जो कि गुणों के सिन्धु हैं, कल्याणकारी हैं, जब उन्हें हम अपने मन में स्थान देते हैं, मन और बुद्धि से उनका संग करते हैं अर्थात उन्हें याद करते हैं तो उनके संग का रंग हम पर ऐसा लगता है कि हम भी दिव्य गुणों का स्वरूप बन जाते हैं । और जब हमारे जीवन में दिव्य गुणों की पराकाष्ठा होने लगती है तो हमारे व्यवहार में स्वत : ही श्रेष्ठ परिवर्तन आने लगता है । सर्व श्रेष्ठ संग तो परमात्मा ही का संग है जिसके लिए गायन है सत्यं शिवं सुन्दरं अर्थात जो सत्य है, शिव है अर्थात कल्याणकारी है और अतीव सुन्दर है अर्थात जिसके कर्म अति सुन्दर हैं । कहावत है न - सुन्दर वह जो सुन्दर कर्म करे (Handsome is that who handsome does) अत : ऐसे गुणों के भण्डार परमात्मा से योग युक्त होने से हमारे व्यवहार में सत्यता, श्रेष्ठता व दिव्यता आ जाती है जो हमें लोक प्रिय बनाने में अत्यन्त सहायक सिद्ध होती है ।

मानसिक एकाग्रता एवं कार्य क्षमता में वृद्धि

जीवन के हर क्षेत्र में प्राणी को सफल होने के लिए मानसिक

एकाग्रता की जरूरत होती है । चाहे कोई विद्यार्थी हो या शिक्षक, गृहिणी हो या कोई कार्यकर्त्ता, व्यापारी हो या अधिकारी, उसे अपने कार्य क्षेत्र में सफलता प्राप्त करने के लिए मन को एकाग्र करना बहुत जरूरी है । परन्तु आज हम देखते हैं कि इसी मानसिक एकाग्रता की कमी के कारण सरकारी दफ्तरों में कितना ही कार्य पड़ा (Pending) रहता है, विद्यार्थी अपने अध्ययन विषय में मन को एकाग्र न कर पाने के कारण परीक्षाफल में असफल घोषित कर दिये जाते हैं, कारखानों में इतना उत्पादन नहीं हो पाता आदि आदि । कारण कि मानसिक एकाग्रता की कमी के कारण कार्यक्षमता भी कम हो जाती है जिसके परिणाम स्वरूप मनुष्य जो जीवन में प्राप्त करना चाहता है, वह नहीं कर पाता और ऐसा होते-होते निरुत्साहित और स्वयं से ही निराश हो जाता है ।

परमात्मा से योग-युक्त होने का अर्थ ही है - सब तरफ से मन को हटा कर स्वयं को आत्मा निश्चय कर ज्योति बिन्दु परमात्मा की पावन, स्नेहमयी स्मृति में स्थित होना । अत : यह मन को एकाग्र करने का अभ्यास हमारी मानसिक एकाग्रता को बढ़ावा देता है फिर चाहे कोई प्राणी किसी भी क्षेत्र में हो, वह उस अभ्यास के परिणामस्वरूप अपने मन को उस कार्य में एकाग्र कर पाता है और उसका जो काम २ घण्टे में पूरा होता था, वह एक घण्टे में ही और एकदम उपयुक्त होता है । और जब वह देखता है कि उसके कार्य सही (accurate) होने लगे हैं, उसका आत्म-विश्वास बढ़ जाता है और आत्म-विश्वास बढ़ जाने से उसके व्यक्तित्व में निखार (Personality Enhancement) आ जाता है ।

इस प्रकार विचार करने पर आप पायेंगे कि उपरोक्त के अलावा बहुत-सी अन्य ऐसी विशेषताओं का विकास हमारे जीवन में होता है जिनकी कि इस संसार में विचरण करते हुए आवश्यकता होती है । और जब किसी को किसी चीज की आवश्यकता अथवा महत्व का ज्ञान हो जाता है तो वह उस कार्य करने में जुट जाता है, तत्परता से करने लगता है और तब तक करता ही रहता है जब तक कि वह उसमें सफल न हो जाए । अत: हमें भी परमात्मा को याद करने की आवश्यकता को समझ कर इसका अभ्यास करना चाहिए । इसके लिए विशेष समय निकालना चाहिए ।

गीत

कलियुगी दुनिया में डूबे थे हम,
शिव बाबा मिला तो किनारा मिला ।
आ गये सतयुगी रास्ते पर कदम,
जब बाबा की नजर का सहारा मिला ।।
संस्कार थे मन को भटकाये हुये,
माया की साया थी दिल पर छाई हुई ।
श्रीमत से हमको मिली हिम्मत,
ज्योति बिन्दु से हमको सहारा मिला ।।
आत्मा को जरूरत थी उत्साह की,
बाबा से प्रेरणा मिली आत्मविश्वास की ।
किसी ने निरहंकारी बनाया मुझे,
मुझ रूह को शिव प्यारा मिला ।।
अब न माया का डर है न क्षणिक सुख का गम,
खुले दिल से शिव को प्यार करते हैं हम ।
बाबा की मुरली से ज्ञान भरपूर मिला,
महावीर बनने का हमको वरदान मिला ।।
चूमेगी सफलता हमारे कदम,
अपनी तकदीर पर नाज करते हम,
मुक्ति, जीवन-मुक्ति का हक है हमको,
अशरीरी बनने का हमको इशारा मिला ।।

ब.कु. रामकुँवर सिंह

हम और आप पहले भी थे . . . (पृष्ठ २६ का शेष) भी यही सिद्ध होता है कि प्रत्येक घटना एक चक्कर अर्थात् वृत्त पूरा करने के बाद अर्थात् अन्त में फिर हूबहू पहले के ही समान घटती है ।

इस प्रकार प्रत्येक कल्प में अपने अनादि-निश्चित पार्ट की वैसे ही आवृत्ति करते रहना जैसे कि एक सिनेमा-फ़िल्म में भाग लेने वाले एक्टरों के खेल को सिनेमा हाल में फिर-फिर हूबहू दिखाया जाता है, 'इतिहास की पुनरावृति' कहा जाता है । यह एक बहुत बड़ा गुहय सिद्धान्त है ।

सृष्टि रूपी वृक्ष का बीज अविनाशी है, इस कारण पुनरावृत्ति

आप जानते हैं कि एक बीज से एक ही प्रकार का वृक्ष निकलता है । अब क्योंकि परमात्मा जो इस सृष्टिरूपी वृक्ष के बीज रूप हैं, अविनाशी हैं, इसलिए बीज के न बदलने के कारण फिर-फिर अर्थात् हर कल्प उससे मानो वही वृक्ष निकलता है, अर्थात् वैसे की वैसी ही सृष्टि रची जाती है । अत: विश्व का इतिहास पुनरावृत्त होता ही रहता है ।

ऊपर 'पुनरावृत्ति के सिद्धान्त की पुष्टि में हमने जो कुछ कहा है उससे यह स्पष्ट है कि इस विराट सृष्टि-नाटक में मनुष्य का पार्ट हर कल्प हूबहू पुनरावृत्त होता है और कि आप और हम पहले भी थे, अब भी हैं और फिर कल्प के बाद भी होंगे और आज आपने जिस समय जिस विचार से इस लेख को पढ़ा है, कल्प के पश्चात् भी वैसे ही पढ़ेंगे !

आध्यात्मिक सेवा समाचार

बम्बई : विलेपार्ले सेवाकेन्द्र से प्राप्त समाचार के अनुसार गणेश चतुर्थी के अवसर पर ब्रहमाकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की मुख्य प्रशासिका दादी प्रकाशमणी जी को विदेश यात्रा पर जाने की शुभ बधाईयाँ देने हेतु वहां के भाई दास हाल में एक "सत्कार समारोह" का आयोजन किया गया । जिसमें बम्बई के अनेक प्रतिष्ठित व्यक्तियों ने भाग लिया । बम्बई हाईकोर्ट के जस्टिस भ्राता एस.सी. प्रताप जी, अग्रणी उद्योगपति भ्राता मोहन भाई पटेल आदि ने दादी जी के प्रति अपनी हार्दिक शुभेच्छायें अर्पण की । इस अवसर पर "विश्व शान्ति" नामक एक बहुत सुन्दर नृत्य नाटिका दर्शाई गई । जिसमें ब्रहमा बाबा की जीवन कहानी पर प्रकाश डाला गया था । ब्र. कु. जगदीश चन्द्र ने भी अपने विद्वतापूर्ण शब्दों में राजयोगी जीवन के अनुभवों की झलक सभी को कराई । दादी जी तथा मोहनी बहन ने भी ईश्वरीय सन्देश सुनाया । बम्बई के सभी सेवाकेन्द्रों के लगभग 1200 राजयोगी विद्यार्थी दादी जी को शुभ बधाईयाँ देने आये । बम्बई के कोलाबा सेवाकेन्द्र पर भी दादी जी को शुभ बधाईयाँ देने हेतु एक स्नेह मिलन का आयोजन किया गया । जिसमें 125 नामीग्रामी सिन्धी भाई बहनें पधारे । सिन्धियों के माननीय आदरणीय राम पंजवानी ने दादी जी का मधुर शब्दों में पुष्प भेंट करते हुए स्वागत किया । प्रसिद्व उद्योगपति नानिक रूपानी ने भी दादी जी का स्वागत किया । "सहेली मण्डल" की बहनों ने मोतियों की माला दादी जी को पहनाई । सिंधी पंचायत तथा संगीत मण्डल के प्रेसीडेन्ट एवं नेवी के 4–5 आफीसर्स ने भी दादी जी को विदेश यात्रा के निमित्त शुभ कामनायें अर्पित की । हवाई अड्डे पर विद्यालय की सह मुख्य प्रशासिका दादी जानकी जी विदेश यात्रा पूरी करके पहुँची थीं, वहाँ पर ही उन्होंने दादी जी से मुलाकात कर उन्हें यात्रा की सफलता के लिए शुभ बधाईयाँ दीं ।

हैदराबाद : समाचार मिला है कि पिछले मास भारत के राष्ट्रपति भ्राता ज्ञानी जैलसिंह तथा उनकी सुपुत्री बहन मनजीत कौर जब हैदराबाद गये तो बहन मनजीत कौर वहां के स्थानीय सेवाकेन्द्र पर पधारीं तथा आध्यात्मिक संग्रहालय का भलीभांति अवलोकन किया । करीब एक घण्टा आपने सेवाकेन्द्र पर समय दिया तथा अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा कि—ईश्वरीय विश्व विद्यालय के महान कर्तव्यों को मैं भलीभांति जानती हूँ । यहां कन्याओं माताओं द्वारा चरित्र उत्थान का बहुत श्रेष्ठ कार्य किया जाता है । राज भवन में राष्ट्रपति जी से भी बहनें व्यक्तिगत मिली तथा उन्हें आध्यात्मिक गीत सुनाते योग अभ्यास भी कराया । यह भी समाचार मिला है कि फेथ एसोसियेशन की ओर से प्राप्त निमन्त्रण पर डिवाइन लाइफ सोसायटी के हाल में ईश्वर प्राप्ति के लाभ और चिन्ह नामक विषय पर ब्र.कु. शोभा बहन ने प्रवचन किया ।

फतेहपुर ईश्वरीय सेवाकेन्द्र द्वारा आध्यात्मिक शिक्षाप्रसार समारोह का सप्ताहिक कार्यक्रम बड़े धूमधाम से आयोजित किया गया जिसमें विचार गोष्ठी प्रभातफेरी, पत्रकार स्नेहमिलन, नगर शोभायात्रा, राजयोग शिविर एवं चरित्रनिर्माण-प्रदर्शनी-प्रवचन का सार्वजनिक कार्यक्रम स्थानीय टाउन हाल में चलाया गया जिसकी अभूतपूर्व सफलता का आधार अखण्ड राजयोग का अभ्यास रहा ।

कार्यक्रम का शुभारम्भ 6 सितम्बर प्रात : पत्रकार बन्धुओं के स्नेह मिलन द्वारा हुआ जिसमें पधारे सभी के प्रश्नोत्तर चले व मुख्य अमृतपत्रिका तथा आज के आध्यात्मिक प्रेमी डा. सिन्हा जी ने अपने व्यक्तिगत जीवन के अनुभवों का ईश्वरीय ज्ञान से मूल्यांकन किया तथा स्वीकार किया कि आज का हर मानव अपने कर्मों के बोझ से दबा चला जा रहा है, ऊपर उठाने वाला सिवाय परमात्मा के कोई नजर नहीं आता और उससे योग बिना विषयों से कोई छूट नहीं सकता । सर्व के कल्याण अर्थ आध्यात्मिक शिक्षा केन्द्रों की स्थापना के उद्देश्यों को सभी ने उपयोगी समझा ।

सात तारीख अपरान्ह पी.ए.सी. बैन्ड सहित नगर में एक सुसज्जित शोभायात्रा निकाली गई जिसकी अनुपम झांकियाँ मुख्य आकर्षण केन्द्र थीं ।

पहाड़ गज (नई दिल्ली) सेवा केन्द्र से भ्राता प्रेम प्रकाश जी लिखते हैं कि गत मास, दिल्ली राजधानी में एक संस्था 'भारतीय राष्ट्रीय मंच' का गठन हुआ जिसके आयोजक स्वामी पूर्ण स्वतन्त्र जी हैं । उन्होंने एक 'दिव्य भारत यज्ञ कार्यक्रम का आयोजन किया जिसमें अनेक धार्मिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक संस्थाओं को आमान्त्रित किया, जिनमें ब्रहमाकुमारी ईश्वरीय विश्वविद्यालय, आर्यसमाज, निजामुद्दीन दरगाह के पीर जामिन निजामी, क्रिश्चनस की प्रसिद्व संस्था 'विद्या ज्योति', भारतीय विद्या भवन, मानव धर्म के भ्राता गुलजारी लाल नन्दा के नाम उल्लेखनीय हैं । हमारे ईश्वरीय विश्वविद्यालय को सम्मिलित होने के लिये उन्होंने विशेष जोर दिया और अनेक पत्र लिखे व टेलीफोन किये । फलस्वरूप हमारे पहाड़गंज सेवा केन्द्र की

ब्र.कु. बहिनें प्रतिनिधि एवं वक्ता के रूप में गई । ब्रहमाकुमारी शील बहिन ने अपने 18 मिनट के प्रवचन में 'दिव्यता', 'दिव्य भारत', तथा 'यज्ञ' पर प्रकाश डाला और बताया कि जब तक भारतवासी लोगों में दिव्य गुण नहीं आते, उनमें पवित्रता नहीं आती, तब तक दिव्य भारत का निर्माण नहीं हो सकता ।

गोहाटी से समाचार मिला है कि वहां के प्रसिद्ध आसामी नामघर मरोलुयुख नामक स्थान पर तथा कुमारपाड़ा क्षेत्र में युवक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया तथा योगशिविर भी रखे गये । जिससे जन जन तक सन्देश पहुंचा । ब्र.कु. मनोहर इन्द्र जी के आबू पर्वत से पधारने पर भिन्न 2 कार्यक्रम रखे गए । गोहाटी में विशिष्ठ व्यक्तियों का स्नेह मिलन तथा शिलांग में पत्रकार सम्मेलन आयोजन किया गया । ब्र.कु. मनोहर दादी का रेडियो 'इन्टरव्यू' भी लिया गया ।

धर्मशाला : हिमाचल प्रदेश महिला मण्डल की मण्डी शाखा द्वारा आयोजित बाल शिविर में ब्र.कु. बहिनों को प्रवचन करने का निमन्त्रण मिला । इस शिविर में 12 से 18 वर्ष के कन्याओं ने भाग लिया । ब्र.कु. बहिनों ने चरित्र निर्माण पर प्रेरणादायक प्रवचन किए ।

गुरुदासपुर : से ब्र.कु. सुमन जी लिखती हैं कि दीनानगर में आध्यात्मिक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया । यह प्रदर्शनी एक मास तक चली । पंचाब के हालात से लोग तंग आकर इस प्रदर्शनी को बड़े उत्साह और खुशी से लाभ ले रहे हैं । गुरुदास पुर तथा दीनानगर में प्रोजैक्टर शो भी किए गए ।

आगरा : ग्राम सेवा अभियान के अन्तर्गत आगरा मण्डल के टेहू शिवालय ग्राम में त्रिद्विवसीय प्रदर्शनी एवं राजयोग शिविर का आयोजन किया गया । हजारों आत्माओं ने लाभ उठाया । फलस्वरूप वहां पर गीता पाठशाला स्थापित हो गई है ।

गोवा सेवाकेन्द्र की तरफ से बॉम्बे से डा. गिरीश भाई और दिव्या बहन पधारने पर यहाँ के मेंटल हॉस्पिटल और मेंटल कालेज में डा. गिरिश भाईजी का "राजयोग द्वारा मनोपरिवर्तन" और "राजयोग मनोपरिवर्तन के लिए औषधी" इस पर प्रवचन हुआ । लगभग 25 विद्यार्थी और 40 डाक्टर्स ने इसका लाभ लिया । साथ 2 अंत में सभी को योग-अभ्यास भी कराया गया । सावंतवाड़ी उपसेवाकेन्द्र की ओर से भी वहाँ के स्कूल में डॉक्टरों के लिए और अन्य व्यक्तियों के लिए डा. गिरिष भाईजी का प्रवचन हुआ ।

श्री गंगानगर : स्थानीय श्री गुरुनानक कन्या उच्चतर माध्यामिक विद्यालय एवं कन्या महाविद्यालय में युवा प्रदर्शनी का आयोजन किया गया जिसमें 500 कन्याओं ने युवा प्रदर्शनी को बहुत ही रुचि से देखा । महाविद्यालय में द्वितीय व तृतीय वर्ष की छात्राओं ने प्रदर्शनी को देखा और अपनी सम्मतियां लिखीं । वहां की प्राचार्या महोदया ने पुन : युवा प्रदर्शनी के लिए भी आमंत्रित किया ।

दिल्ली-एक सितम्बर को राजनीतिक वर्ग एवं समाज सेवकों के लिए स्नेह मिलन का कार्यक्रम पाण्डवभवन के हाल में ही रखा गया । इस सेवा के लिए 500 कार्ड सभी सेवाकेन्द्रों की ओर से बांटे गये । इस कार्यक्रम के मुख्य अतिथि थे भूतपूर्व जस्टिस एम.एच.बेग जो कि मैनोरिटी कमीशन आफ इन्डिया के चेयरमैन हैं, उन्होंने आये हुए सभी प्रतिष्ठित व्यक्तियों को सम्बोधित करते हुए कहा कि यहां पर जो आत्मा का ज्ञान दिया जाता है वह व्यवहारिक जीवन के लिए बहुत उपयोगी है और सारे विश्व को एक कर देने के लिए श्रेष्ठ माध्यम है । अत: रूहानियत का व्यवहार ही परमात्मा के समीप लाता है ।

कर्मातीत अवस्था को प्राप्त करने के लिये महामन्त्र

(पृष्ठ ३२ का शेष)

सृष्टि स्थापन करने, अथवा मुक्तिधाम में ले जाने के लिये आते हैं । अत: मुक्ति और जीवन्मुक्ति का दाता एक परमात्मा ही है, न कोई लौकिक गुरु, न मत-संस्थापक, न ही विद्वान् ।

"माम एकम् शरणंव्रज—"यह एक महामन्त्र (सर्वोत्तम सम्मति) है जिस द्वारा दु:ख की निवृत्ति हो जाती है । विकार रूपी रोग को दूर करने की यह एकमात्र संजीवनी बूटी और परम औषधि है । परन्तु जैसे कोई मूर्ख बीमारी को दूर करने के लिए औषधि का प्रयोग करने के बजाय नुस्खे हो रटता रहे वैसे ही बेसमझ लोग इस महामन्त्र अर्थात् अनमोल राय पर चलने के बजाए इस श्लोक का पाठ ही करते रहते हैं वे नित्य प्रति इस महामन्त्र को रटते ही रहते हैं । जैसे, "मैं पहुँच जाऊँ, पहुँच जाऊँ" कहते रहने से कोई मंजिल (लक्ष्य) पर पहुँच नहीं सकता बल्कि चलते रहने से ही पहुँच सकता है, वैसे ही, "प्रभु जी हम शरणागत तेरे" कहते रहने से ही अनमोल रत्न हाथ नहीं लगते हैं । तो कलियुग के इस अन्तिम जन्म की भी अन्तिम घड़ियों में उस एकमात्र सद्गतिदाता, ब्रहमा रूप द्वारा सर्वोत्तम मत देने वाले, उस परम बुद्धिमान परमात्मा शिव की यदि शरण न ली तो यह पाप की गठरी शीश पर धरी ही रहेगी और फिर शीश पकड़कर रोना ही पड़ेगा, क्योंकि इस गठरी को उठाकर मुक्ति के द्वार तक न कोई आज तक पहुँचा है और न पहुँच पायेगा !!!

विदेश से प्राप्त ईश्वरीय सेवा समाचार

न्यूयार्क : प्राप्त समाचार के अनुसार विश्व शान्ति दूत दादी प्रकाशमणी जी विश्व शान्ति का सन्देश देने हेतु विश्व परिक्रमा के पहले स्थान "न्यूयार्क" में जब पहुँची तो हवाई अड्डे पर एयर इन्डिया तथा अन्य सरकारी अधिकारी, अमेरिका के कुछ गणमान्य नामीग्रामी व्यक्तियों एवं राजयोग सेवाकेन्द्र के भाई बहनों ने आपका भव्य स्वागत किया । स्थानीय सेवाकेन्द्र पर पहुँचते ही वहाँ के दो प्रमुख रेडियो वालों ने दादी जी का इन्टरव्यू लिया । इसके पश्चात दादी जी ने 100 से भी अधिक नगर के विशेष व्यक्यिों की एक सभा को विश्व शान्ति का सन्देश दिया । दूसरे दिन आंप न्यूयार्क से टोरन्टो के लिए रवाना हुईं । सेवाकेन्द्र पर नियमित विद्यार्थियों से मिलन मानने के पश्चात शहर के प्रतिष्ठित व्यक्तियों के लिए आयोजित स्नेह मिलन में भाग लिया । इस स्नेह मिलन में गुजराती, मराठी, अंग्रेजी तथा फ्रैन्च आदि सभी भाषा के भाई बहन आये थे । दादी जी ने अपने मधुर शब्दों में सबको ईश्वरीय सन्देश दिया । मोहनी बहन ने सामूहिक योग अभ्यास कराया । तत्पश्चात अखबार वालों ने दादी जी का इन्टरव्यु लिया । दूसरे दिन नियमित राजयोगी भाई बहनों का क्लास वहाँ के हिन्दू सेन्टर में चला । शाम को टोरन्टो यूनिवर्सिटी के हाल में सामूहिक कार्यक्रम रहा जिसमें शहर के दो नामीग्रामी प्रोफेसर एवं वैज्ञानिकों ने भी अपने वक्तव्य दिये । दादी जी ने शान्ति का सन्देश दिया । मोहनी बहन ने योग अभ्यास कराया । लगभग 250 कैनेडियन इस सभा में शान्ति पूर्वक सारा कार्यक्रम देखते सुनते रहे । कनाडा के दूसरे सेवाकेन्द्र मांट्रिअल शहर में जब पहुँचे तो हवाई अड्डे पर आपको सफेद फूलों से ताज पहनाकर वहां के भाई बहनों ने स्वागत किया । मन्ट्रिअल के कानवेन्ट स्कूल के हाल में सार्वजनिक कार्यक्रम चला जिसमें 150 नये भाई बहन उपस्थित थे । वहां के हिन्दू मन्दिर में मोहनी बहन का प्रवचन हिन्दी में हुआ ।

न्यूयार्क से और भी समाचार मिला है कि गत मास "हवाई" नाम सुन्दर शहर में "यूनिटी चर्च " की ओर से एक सम्मेलन का आयोजन किया गया था जिसमें ब्रहमाकुमारी बहनों को भी निमन्त्रण मिला । यह सम्मेलन 10 स्थानों पर लण्दन, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि में एक साथ आयोजित किये गये थे । न्यूयार्क सेवाकेन्द्र की इन्चार्ज ब्रहमाकुमारी मोहिनी बहन ने सवेरे की सभा में 30 मिनट का प्रवचन किया । दो वर्कशाप में डेढ घण्टे तक प्रवचन एवं योग अभ्यास के कार्यक्रम चले । धर्म नेताओं को भी ईश्वरीय सन्देश सुनाकर रिलीजस चार्टर भेंट किया गया । दूसरे दिन "एक दिल, एक मन, एक दुनिया" नामक विषय पर हरेक ने अपने-2 विचार व्यक्त किये । ब्रहमाकुमारी मोहनी बहन ने बताया आत्मिक सम्बन्ध से ही नई दुनिया आ सकती है । आध्यात्मिक मूल्यों द्वारा विश्व शान्ति पर भी एक घण्टे की वर्कशाप चली । सभी को ईश्वरीय विश्व विद्यालय की गति विधियों की पूर्ण जानकारी प्राप्त हुई ।

मनीला : समाचार मिला है कि लण्दन सेवाकेन्द्र की क्षेत्रीय संचालिका ब्र.कु. सुदेश बहन के मनीला पहुँचने पर अनेकानेक सेवायें हुई हैं— सर्वप्रथम वहाँ के भारतीय मन्दिर में 200 भक्त आत्माओं के समक्ष प्रवचन चला । सेवाकेन्द्र पर "पारिवारिक एकता व शान्ति की कुन्जी-सकारात्मक वृति" नामक विषय पर प्रवचन हुआ जिसमें लगभग 40 परिवार के लोग पधारे । उन्होंने सेवाकेन्द्र पर पारिवारिक स्नेह तथा एकता का अनुभव किया । भारतीय महिला क्लब में भी प्रवचन चला—विषय था आध्यात्मिकता ही सुख शान्ति की चाबी है । वहाँ के "गुड शेफर्ड" नामक संस्था में दो बार सुदेश बहन का प्रवचन हुआ जिसमें 50 कुमारियों तथा 8 नन्स ने भाग लिया । यह संस्था बच्चों को आध्यात्मिक उन्नति में विशेष सहायता देती है । उन्होंने बहनों को समय प्रति समय ऐसे कार्यक्रम करते रहने का निमन्त्रण दिया । एक कार्यक्रम सर्व धर्म वालों के लिए आयोजित किया गया— जिसमें मुस्लिम अफेयर्स के मिनिस्टर, नन्स, प्रीस्ट, बौद्धी तथा कैरो के एम्बेसडर आदि ने भाग लिया । सिटी मनीला के आर्कबिशप से भी सुदेश बहन की व्यक्तिगत मुलाकात हुई तथा उन्हें आबू आने का निमन्त्रण दिया । रक्षाबन्धन के अवसर पर 45 नये प्रतिष्ठित व्यक्तियों को पावन राखी बांधी गई । इस प्रकार थोड़े समय में अनेकानेक आत्माओं को ईश्वरीय सन्देश प्राप्त हुआ । यह भी समाचार मिला है कि मनीला में अभी नये मकान में सेवाकेन्द्र स्थानान्तरित किया गया है, जिसके उद्घाटन अवसर पर इन्डियन एम्बेसी के फर्स्ट सेक्रेट्री वा पार्लियामेन्ट के कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति सेवाकेन्द्र पर पधारे । मकान के 4 नये कमरों में कोई न कोई विशेष प्रोग्राम चलता रहा, किसी में शाकाहारी भोजन की स्लाईडस, किसी में आध्यात्मिक ज्ञान की विडियो, किसी में राजयोग अभ्यास आदि । लगभग 80 भाई-बहनों ने आध्यात्मिक लाभ लिया । मैन्टल हैल्थ संस्था के 6 मनोवैज्ञानिकों ने बहनों से काफी समय तक ज्ञान चर्चा की ।

शेष पृष्ठ २१ पर

कर्मातीत अवस्था को प्राप्त करने के लिये महामन्त्र

हर एक कर्म का फल होता है, जो कि कर्ता को जल्दी या देर से अवश्य भोगना पड़ता है—इससे कोई इंकार नहीं कर सकता । और, किसी मनुष्य ने क्या-क्या कर्म किये, किन का फल वह भोग चुका है और किस-किस कर्म का क्या-क्या फल उसे कब और किस रूप में भोगना है, यह कोई भी मनुष्य नहीं जानता । न ही वह यह जानता है कि पहले उसने किस-किस कर्म का फल क्या और किस रूप में भोगा है अथवा अब भोग रहा है । कर्म का फलदाता मनुष्य स्वयं नहीं । वह कर्म की गहन गति को नहीं जानता । परमात्मा ही एकमात्र अजन्मा, अविनाशी, साक्षी, अकर्ता, अभोक्ता आत्मा है जो सबकी जन्म-पत्री और कर्मपत्री को जानता है । इसलिये गीता में भगवान् के महावाक्य हैं कि, "हे वत्स ! मैं तेरे अनेक जन्मों को जानता हूँ परन्तु तुम नहीं जानते । मैं ही कर्म की गुह्य गति को जानने वाल हूँ ।"

उन्हीं भगवान् के महावाक्य हैं कि "तुम कितने ही पापी क्यों न हो, मेरी शरण लो (माम् एकम् शरणं व्रज), मैं तुम्हें सब पापों से मुक्त कर दूँगा ।" विचार की बात है कि शरण लेने में ऐसा क्या भेद है कि जिससे मनुष्य के पाप अथवा विकर्म ही समाप्त हो जाते हैं । क्या शरण लेने मात्र से मनुष्य के पापों का बोझा उतर जाता है ? यदि शरण लेना अथवा शरणागति द्वारा विकर्मों का अन्त होना इतना सहज होता तो मनुष्य "नौ सौ चूहे खाकर बिल्ली हज को चली" की कहावत के अनुसार पाप करता रहता और एक दिन शरण ले लेता । स्पष्ट है कि "शरण लेने" का कोई विशेष अर्थ है ।

शरण लेने का अर्थ है—"अपना सब कुछ समर्पण करके उसकी ही आज्ञानुसार उनका प्रयोग करना । संसार में कोई भी कर्म ऐसा नहीं जिसका तन, मन अथवा धन से सम्बन्ध न हो । विकर्म होते हैं तो भी इन्हीं के प्रयोग से ही होते हैं और धर्म अथवा सत्कर्म होते हैं तो भी इन्हीं के प्रयोग से ही होते हैं । अब इन द्वारा विकर्म न बने बल्कि शुभ कर्म बनें, यह उस ही की राय (सम्मति) पर चलने से सम्भव हो सकता है जो कि कर्म ही गुह्यगति को जानता हो, हमारी जन्म-पत्री से वाक़िफ़ हो । मुझे किसके साथ किस प्रकार का लेन-देन रखना है ताकि मेरा हिसाब-किताब न बने, यह सिवाय परमात्मा के कौन बता सकता है ? देह के सम्बन्धियों के साथ मेरा अभी क्या लेन-देन अथवा मेरा कर्म-बन्धन है, मुझे जीवन-निर्वाह किसके धन से, किस हद तक कैसे करना है, इस कौड़ी-कौड़ी का हिसाब-किताब परमात्मा के अतिरिक्त और कौन जानता है ? मुझे किसी के पास कहाँ तक सेवा लेने, खाने-पीने इत्यादि का अधिकार है, यह कौन मनुष्य जानता है ? इन सब कर्म-बन्धनों से मुक्त होने के लिए क्या स्वयं कर्म-बन्धन में फंसे हुए इन्सान की मत पर चलने से सफलता हो सकती है ? उत्तर मिलेगा कदापि नहीं । एक परमात्मा ही हैं कि जिनकी शरण लेने अर्थात कदम-कदम पर जिनकी राय (सद्मति) लेने से इन्सान की कर्म-बन्धन से मुक्ति हो सकती है अथवा जन्म-जन्मान्तर का हिसाब-किताब समाप्त हो सकता है । इसके सिवा मुक्ति अथवा कर्मातीत अवस्था को प्राप्त होने का और कोई उपाय नहीं है ।

परमपिता परमात्मा के अवतरण का यही तो मुख्य कारण है । वह सिर्फ़ लोक और परलोक के गुह्यरहस्य ही बताने के लिए अवतरित नहीं होते बल्कि पग-पग पर सावधान करने के लिए, मार्ग-प्रदर्शना करने के लिए, राय देने के लिए, साकार तन का आधार लेता है । यदि वह साकार रूप धारण न करे, तो हरएक मनुष्य को, उसकी जन्म-पत्री, परिस्थिति, योग्यता, कर्मबन्धन के अनुसार वह सर्वोत्तम राय कैसे दे सके और यदि राय न दे तो कर्म-बन्धन के दलदल में फँसा हुआ इन्सान अथवा विकर्मों के अंधेरे कुँए में गिरा हुआ इन्सान बाहर कैसे निकल सके ? परमात्मा के सर्वोत्तम मत के बिना कर्म-बन्धन से कभी न छूट सकेगा । अत: दुख की पूर्ण निवृत्ति के लिए कर्मों का हिसाब-किताब चुकाना आवश्यक है । उसको चुकाने के लिए परमात्मा की मत आवश्यक है । उसकी मत लेने के लिए उसकी शरण लेना आवश्यक है अर्थात उसके समर्पण होना, अथवा उसका बच्चा बनना आवश्यक है क्योंकि पिता अथवा टीचर (अध्यापक) अथवा गुरु अपने बच्चों को अथवा शिष्यों को ही तो मत देता है न कि दूसरों को । और, साकार, बच्चों (व्यक्त आत्माओं) को मत देने के लिए पिता परमात्मा का साकार रूप धारण करना आवश्यक है ताकि वह अपने साकार रूप से स्वयं आदर्श कर्म करके दिखाये और कर्म करना सिखलाये । परमपिता परमात्मा के ज्ञान को तो मनुष्य धारण भी कर लेता है परन्तु कर्म-विकर्म न हों, आगे के लिए कर्मों का हिसाब-किताब न बने, हद की बुद्धि वाला मनुष्य माया से छला न जाये, यह एक परमात्मा ही सतगुरु का हाथ लेने से सम्भव है, वरना नहीं, कदापि नहीं ।

ज्ञान और भक्ति मार्ग में यही तो अन्तर है । भक्तिमार्ग वाले तो केवल गायन ही करते हैं कि हे प्रभु हम तुम्हारी शरण आए हैं । वे तो केवल कहते ही हैं कि "दवार पड़ा मैं तेरे कृपा करो भर्ता, परब्रहम परमेश्वर दुख के हर्ता", परन्तु न वे यथार्थ रीति में परमात्मा की शरण लेते हैं और न ही उसके मत पर चलते हैं क्योंकि परमात्मा की मत अथवा शरण अथवा शिक्षा तो प्राप्त ही तब होती है जब वह स्वयं इस पृथ्वी पर आकर (ब्रहमा का) का साकार तन धारण करता है । तब उससे ज्ञान लेने वाला ज्ञानी वत्स क्रियात्मक रीति (प्रैक्टीकल में) उसकी शरण अथवा गोद ले, उसकी आज्ञा पर चल, मुक्ति और जीवन-मुक्ति को प्राप्त होता है ।

परमात्मा का अवतरण तब होता है जब सब मनुष्यात्माएँ कर्म-बन्धन में फँसी हों । उस ही समय को धर्म-ग्लानि का समय कहा जाता है तब ही परमात्मा कर्म-बन्धन से मुक्त कर जीवन्मुक्त सतयुगी

(शेष पृष्ठ ३० पर)

जगदीश चन्द्र हसीजा, मुख्य सम्पादक, ब्र० कु० आत्म प्रकाश, सम्पादक, बी 9/19 कृष्णनगर, दिल्ली द्वारा सम्पादन तथा ग्रन्थ भारती, शाहदरा दिल्ली-32 से छपवाया, Regd. No. 10563/65-D, (E)—70